दिव्य जीवन
ॐ
श्री श्री 108 रामदास जी महाराज
(करह वाले बाबा जिला मुरैना)

श्री 108 बाबा रामरतन दास जी महाराज, श्री 108 तपसी श्री सीताराम दास जी महाराज
श्री 108 श्री सिद्ध बाबा, श्री 108 लखनदास जी महाराज
श्री 108 रामदास जी महाराज

// श्री रामचन्द्रायनमः //

अनन्त श्री विभूषित

महाराज श्री रामदास जी

(करह वाले बाबा)

दिव्य - जीवन

लेखक :

डॉ. राधारमण शर्मा

एम.ए., संस्कृत, हिन्दी, पी.एच.डी.

(स्वर्ण पदक प्राप्त)

सौजन्य से

श्री 108 बाबा रामकिशन दास

हनुमानगढ़ी, नूराबाद, जिला-मुरैना (म.प्र.)

द्वितीय संस्करण सम्वत् 2064

पुस्तक प्राप्ति स्थल

बाबा रामकिशन दास

हनुमानगढ़ी, नूराबाद, जिला-मुरैना (म.प्र.)

द्वितीय संशोधित संस्करण-2007

साज-सज्जा

हरीश कुशवाह

ग्वालियर (म.प्र.)

मुद्रक

जैन प्रिंटिंग प्रेस

दाल बाजार, ग्वालियर
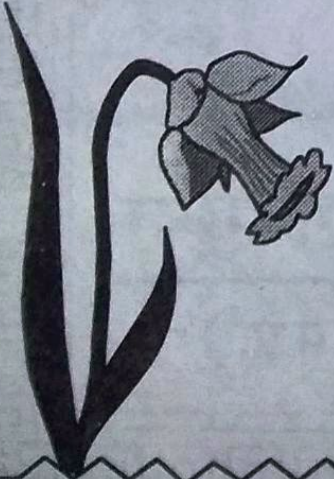
* न्यौछावर : पच्चीस रुपए मात्र

महाराजश्री ने अपने अकिंचिन जीवन अर्थात् आय की दृष्टि से कोई निश्चित स्रोत नहीं, केवल प्रभु कृपा ही अयाचित रूप से उनकी झोली पर कल्प वृक्ष की अक्षय छाया बनाए रही। उसी से जीवन भर भगवत आश्रम, तपोभूमि, मन्दिर एवं यज्ञशाला, संतनिवास एवं संकीर्तन भवन, गौशाला, गौसेवा यज्ञ, भगवन्नाम चलते ही रहे। इससे वे अवकाश नहीं पा सके। अखण्ड रूप से यही श्रम कभी बन्द नहीं हुआ। जीवनभर चलता ही रहा। जो अब भी चल रहा है। इससे पूर्व जब करह स्थान निर्माण प्रारम्भ हुआ तो संयोग से परम्परा श्री गंगा प्रवाहित हो चली। विक्रम सं. 2001 के विराट यज्ञ महोत्सव के बाद हनुमानगढ़ी नूराबाद का चित्रण सामने आता है।

श्री बड़े महाराज जी सुखासीन अपने नामामृत में डूबे हुए अपने इष्ट का दर्शन करते हुए, टकटकी लगाए हुए, इतने में ही नूराबाद से रामसिंह भगत जी के ताऊ हुकमसिंह सा. करह पहुँचे। महाराजश्री से दण्डवत की और बोले- वाह क्या कहने गुरु स्थान पर तो कुत्ते मूत रहे हैं। यहाँ बैकुण्ठ बन रहा है। उनके कहने का मतलब था कि नूराबाद श्री तपसी जी महाराज जो बड़े महाराज जी के गुरु थे। वह स्थान चमगीदड़ों की चरागाह बन गया है। सबसे गया-गुजरा घूरे के रूप में गन्दगी का ढेर बन गया। इतना सुनते ही साधुओं के आज्ञा की, चलो भैया, सब चलें श्री गुरु महाराज बुला रहे हैं। सभी ने आज्ञा शिरोधार्य की। उस आश्रम में जो भी आटा, दाल सामान था, पोटली बाँधकर सिर पर रखी। कीर्तन करते हुए नूराबाद आकर नरसिंह मन्दिर के आस-पास सफाई करने लगे। संयोग से छोटे महाराज जी लखनऊ से बुलवाए गये। दौड़कर आए, सामान सेठ धनपति के घर पर छोड़ा और बड़ी शीघ्रता से गुरुचरणों में आकर लिपट गये। हाथ जोड़कर बोले यह क्या लीला है। बड़े महाराज जी ने कहा, भैया हनुमान जी की आज्ञा है।

अब तो पहले यहीं पर हनुमान जी आवें, मन्दिर बने, तब कुछ और हो। श्री छोटे महाराज जी ने बहुत प्रार्थना की, यहाँ न तो साधुओं के रहने के

लिए व्यवस्था और न भोजन प्रसाद की, आपकी आज्ञा मानकर हम सब कुछ करेंगे। परन्तु जब देखा कि श्री महाराज जी किसी प्रकार सन्तुष्ट नहीं हैं तो अपने शरीर की समस्त सुध-बुध खोकर गुरुजी के संकल्प में संलग्न हो गये। एक ओर साधु आगन्तुकों की भीड़भाड़ उनके रहने व प्रसाद की व्यवस्था और इस हनुमान की रचना व निर्माण कैसे हो। अर्थागम के लिए यहाँ कोई स्रोत है ही नहीं, फिर भी उनका संकल्प स्वयं सिद्ध होता था। कैसे व्यवस्था लगी इसको तो उनके वह गुरुदेव ही जानें। चाहे जैसा मौसम हो, लंगोटी के ऊपर लाल साफी लपेटे हुए हाथ में छाता पूरे क्षेत्र में पैदल घूम-घूमकर एक-एक पत्थर संजोया। काम करने वाले मजदूरों की इतनी संख्या कि एक बोरी आटे की रोटियां एक समय में बनती थी। यह सेवा श्री रामकिशन दास जी ने की जो आज हनुमानगढ़ी के उत्तराधिकारी हैं। जिन्होंने अपनी सेवा से मार्बल, टायल्स से उसे नए भव्य आकर्षक रूप से सजा दिया है।

हनुमानगढ़ी जैसा नाम है, वैसा ही दिव्य भव्य स्वरूप आपने बनवाया। केवल यही स्थान नहीं, जहाँ भी जितने निर्माण करवाए वे वास्तुशास्त्री पण्डित विद्वानों के लिए एक आदर्श हैं। पन्द्रह फुट लम्बी 9'' ×10'' मोटी पटियां राजाधिराज श्री हनुमान जी के सम्मुख आगे की दालान पर हैं। दोनों ओर इकत्तीस पटियों के हॉल एवं बरामदे हैं। ग्वालियर दरबार के गोरखी महल का रूप स्थापित कर दिया है। जगमोहन में महाराजाधिराज हनुमानजी की प्रतिष्ठा हुई। इस प्रकार का दुर्लभ दर्शन भारत वर्ष में कुछ ही स्थानों पर है। राजाधिराज के आगे का हॉल 20×60 एवं दोनों ओर दालान 20×60- की दो मंजिल बनाकर तैयार हुई। इस दिव्य हनुमानगढ़ी निर्माण के पश्चात् राजाधिराज श्री हनुमान जी की प्रतिष्ठा के समय भारत वर्ष की सुप्रसिद्ध रामलीला एवं सुप्रसिद्ध आचार्य, विद्वान, सिद्ध सन्तों का वैसा ही विराट मेला हुआ जैसा प्रथम यज्ञ में करह पर हुआ था, उसी आनन्द के साथ

सम्पन्न हुआ। उस समय तत्कालीन नरेश श्रीमंत सिंधिया श्री राजमाता साहिबा तथा कई नरेश भी पधारे। इस क्षेत्र के लिए ऐसा सुअवसर कभी नहीं आया। यहाँ के इतिहास में वह अद्वितीय है, ऐसा सभी नर-नारियों का मत है। श्री बड़े सरकार अन्तिम समय में, श्री छोटे महाराज जी निरन्तर ही दस वर्ष यहीं पर रहे।

राजाधिराज हनुमान जी की प्रतिष्ठा के पश्चात् श्रीधाम करह इसका पूर्व स्वरूप सम्वत् 1990 तक मात्र इतना ही था कि नीम वृक्ष जो पटिया के पास है, उसके पीछे एक छोटी सी गढ़ी, जिसमें राम जी मन्दिर, आगे एक छोटी सी पाटौर, सरयू मात्र एक झरना था जिसका उल्लेख पहले ही तपोभूमि एवं दिव्य जीवन में आ चुका है। आज यहाँ मारकण्डेश्वर जी बिराजमान हैं। वहाँ एक बट का विशाल वृक्ष, उसके नीचे श्री बड़े महाराज श्री का आसन, श्री छोटे महाराज जी ऊपर घासफूस के टपरे में जहाँ आज कैलास नाम से निवास दर्शन हैं, इसके अतिरिक्त कहीं सिर छुपाने के लिए कोई स्थान नहीं था। गर्मी हो, वर्षा या शीत, खुले आसमान के नीचे नाम संकीर्तन, रामायण गान चलता रहता था। सामने आज उस स्थान के ठीक सामने विशाल एकादशमुख भगवान हनुमानजी का विशाल 12 फुट लम्बा विग्रह शोभन रूप में विद्यमान है। भारत वर्ष में यह अपनी सानी का दूसरा स्थान है।

श्री विजय राधव सरकार का मन्दिर एवं प्रतिष्ठा सन्त निवास ऊपर का समस्त निर्माण जो महाराज श्री के पास चारों ओर दो मंजिला बना है। क्रमशः भण्डार गृह, प्रसाद स्थल, आटा चक्की मिल, जनरेटर का कमरा, छोटी यज्ञशाला एवं परिक्रम उसके चारों ओर कमरों का निर्माण हुआ। दक्षिणी भाग पूरा दो मंजिला बन चुका है, तत्पश्चात् मैया के दो सिंहद्वार, प्रवेश द्वार, जैसा पहले राजमहलों में हस्तिद्वार (हतियापौर) रहता था, वैसा ही द्वार बनवाया। बाहर बाईं ओर विशाल गौशाला दाहिनी ओर आगे चारा

रखने का गोदाम, गंगासागर, कढ़ाव का कमरा, इसी के आगे दुकानें चैतन्य महाप्रभु कीर्तन का धाम, यात्री विश्राम गृह लगा हुआ गुरुसेवा सदन है। दाहिनी ओर दुकानें एवं जनता सदन, इस प्रकार आश्रम में कुल कमरों की संख्या 250 है। आगे विशाल भण्डार गृह भक्तिसेवा सदन हॉल, उसी से लगा हुआ चिकित्सालय, फिर गोपाल गौशाला, पीछे विशाल लीला एवं प्रवचन मंच है जो अपने आप में दर्शनीय है। चिकित्सालय, सेवासदन, गुरुसेवा सदन तो द्वारिकाधाम की याद दिलाते हैं जिनमें महाराजश्री का भावस्वरूप साकार दर्शन देता है। फिर मुख्य द्वार, सिंहद्वार, हस्तिद्वार से बृहद हैं, दो मंजिले हैं, उसी के आगे आरक्षी विभाग की चौकी है।

पूर्व की ओर विशाल यज्ञशाला एवं गंगासागर, यहाँ यज्ञीय वार्षिक उत्सव के यज्ञ एवं भण्डारे चलते हैं। समीप ही रतन सागर है। जहाँ छोटा संत निवास एवं यज्ञाचार्य निवास है। सरयू से लगे हुए दोनों ही महाराज श्री के विग्रह छत्रियों में विराजमान हैं। बगल में श्रीराम नाम बैंक है।

परिक्रमा मार्ग सम्पूर्ण पक्का जिस पर रोशनी की व्यवस्था है। मध्य में श्री सिद्ध बाबा की गुफा एवं मन्दिर है। मन्दिर के पास वार्षिक उत्सव में भक्ति की 24 चौपाइयों के साथ अहर्निश गान चलता है। उनका हॉल है ठीक उसके सम्मुख नया श्रीराम नाम बैंक बना है। पूरा स्थान पक्का बन चुका है। कहीं भी फर्श कच्चा नहीं है।

तीन स्थानों पर बोरिंग कूप हैं जहाँ पानी की मोटरें लगी हुई हैं। वहाँ पर उनकी देखरेख करने वालों के आवास बने हुए हैं, जहाँ से आजकल जल सेवा चल रही है।

परिक्रमा मार्ग से बाहर दक्षिण, पश्चिमकौण पर श्री नरसिंह शिला वह स्थान है। वहां एक ही इतनी विशाल चट्टान है जिसके नीचे शेर रहते थे। शेर की मांद भी प्रायः ऐसे ही शून्य जंगल में हुआ करती है पर आज यहाँ इतना जंगल नहीं रहा है। कभी-कभी श्री महाराज जी शेरों के बीच

करह आश्रम वृन्दावन तीर्थ

उसी मांद में नरसिंह शिला में पहुंच जाते थे। आज भी दर्शक देखकर आश्चर्य चकित हो जाते हैं क्योंकि शेरों की रगड़ से वह शिला इतनी चिकनी हो गई है जिसे देखकर आश्चर्य होता है। आजकल वहाँ छोटा सा मन्दिर बन गया है, सेवा पूजा चल रही है।

नरसिंह शिला के नीचे ही अम्बिकेश्वर स्थान है। ग्वालियर से श्योपुर जाने वाली छोटी रेल लाइन का अम्बिकेश्वर नाम से स्टेशन है जहाँ से करह जाने वाले यात्री जाते-आते हैं। यहाँ अम्बाजी का मन्दिर है, समीप ही सन्त निवास भोग, प्रसाद सेवार्थ कमरे एवं परकोटा बना हुआ दिव्य मन्दिर है। आगे चलकर रूअर ग्राम में प्राचीन मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया।

पूर्व की ओर सीतापुर गाँव में जहाँ श्री बड़े महाराज जी के बड़े गुरुभाई थे, वहाँ पर राम-जानकी मन्दिर जो नष्टप्राय हो गया था, उसे नूतन स्वरूप में बनवाया जो आधुनिक सुसज्जा से सुसज्जित है। जिसे आज देवाला कहते हैं, पहले नूराबाद कैपिंग ग्राउण्ड शासकीय क्षेत्र था, उससे लगा हुआ आगरा-मुम्बई राष्ट्रीय राजमार्ग पर बहुत ही आकर्षक श्री हनुमान

मन्दिर बनवाया। आजकल औद्योगिक क्षेत्र आ जाने से उसका सौन्दर्य और भी आकर्षक हो गया है।

सर्वप्रथम मन्दिर निर्माण करह स्थान पर, जहाँ प्रथम विशाल यज्ञ हुआ, उसी की वेदी के ऊपर मैया का मन्दिर है जो कोसों दूर से दृष्टि आकर्षित कर रहा है। करह निर्माण नूराबाद हनुमानगढ़ी के लगभग पचास वर्ष पश्चात् कुछ अन्य मन्दिर जो अस्तित्व हीन हो चुके थे, बिल्कुल जीर्ण अवस्था में केवल नाम शेष रह गये थे, उनमें प्रमुख रूप से हनुमान जी का, श्री गणेश जी का मन्दिर, लाला का मन्दिर, जटाधारी के मन्दिर थे। इन सभी का आधुनिक रूप से निर्माण कराया तथा उनकी सेवा पूजा संत एवं पुजारी अधिकारी आदि की सम्पूर्ण व्यवस्था की जो आज भी विधिवत चल रही है।
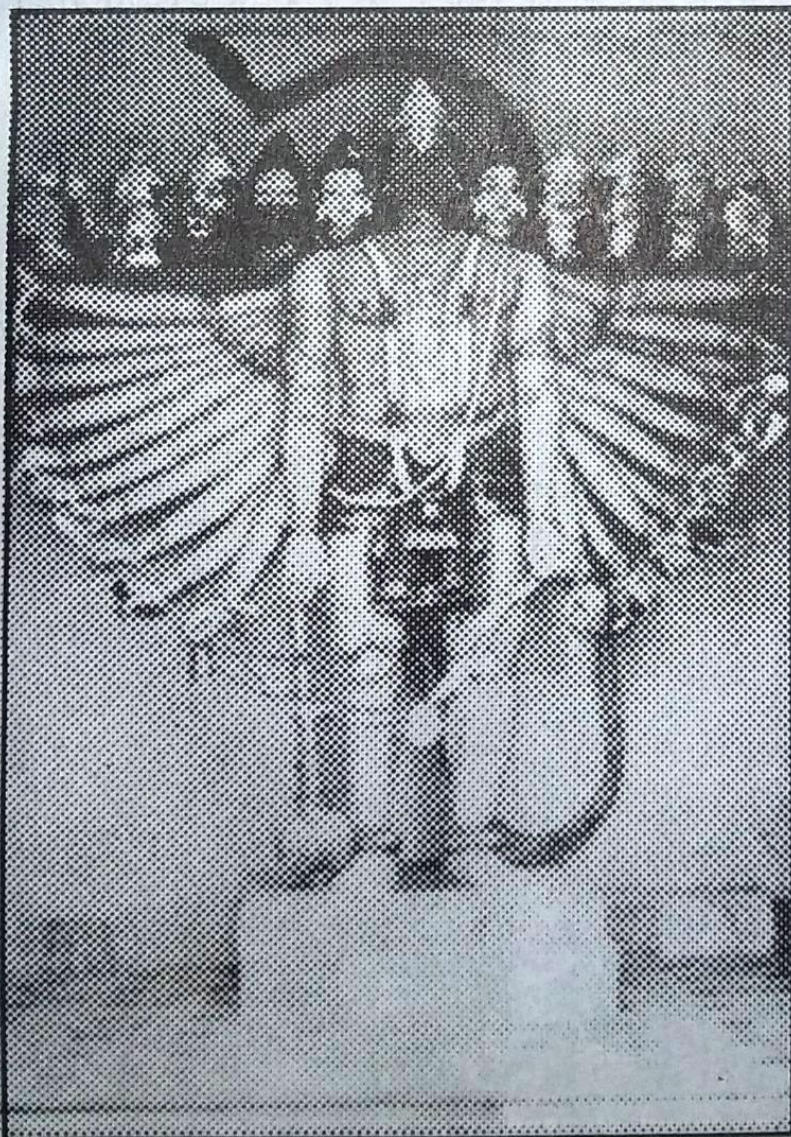
टेकरी आगरा-मुम्बई राष्ट्रीय राजमार्ग पर जहाँ से करह स्थान के लिए सुमावली की ओर से मार्ग जाता है। तिराहे पर पूर्व में ऊपर श्री बड़े महाराज जी ने टेकरी के ऊपर तप किया था, वहीं पर एक दिव्यधाम श्री एकादश मुखी हनुमान जी की प्रतिष्ठा एवं मारकण्डेश्वर महादेव को विराजमान किया। यद्यपि एकादश हनुमान जी करह पर विराजमान किये किन्तु कभी-कभी श्री महाराज जी कहते

थे कि यहाँ हनुमान जी आ गए किन्तु पीछे कोने में पड़ गये। आज से तीन वर्ष पूर्व यहाँ टेकरी पर विशाल मार्बल मन्दिर उसमें सम्पूर्ण आधुनिक सुविधाएँ अतिथि यात्रियों की भक्ति जनोपयोगी सामग्री व्यवस्थित है, यह धाम एक तीर्थ का रूप ले गया है जो सदासर्वदा उसी वैभव में स्नात रहता है, दर्शनीय है। टेकरी पर एक छोटा सा मन्दिर पहले ही बनवा दिया था। उसी के समीप एक विद्या मन्दिर "महात्मा रामरतन दास उच्चतर माध्यमिक विद्यालय" बनवाया जो बाद में शासनाधीन करा दिया गया, भव्य भवन बना हुआ है।

टेकरी से पूर्व में श्री बड़े महाराज जी की जन्मभूमि ग्राम जरारा में भी विशाल मन्दिर श्री सीतारामजी, महाराज जी बहुत बड़े आकार मण्डल लगभग चार बीघा भूमि में बना हुआ है। करह स्थान जैसी ही व्यवस्था यहाँ पर भी है।

धनेले ग्राम में भी प्राचीन मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया एवं नूतन भव्य

विग्रहों की प्रतिष्ठा मन्दिर का प्रकार मण्डल, सिंहद्वार आदि आधुनिक सज्जा से विभूषित किया है।

मीरा नगर मुरार, ग्वालियर में श्री रामजानकी एवं मैया की भव्य प्रतिष्ठा शिव परिवार के साथ नूतनशैली से निर्माण कराया। सेवा पूजार्थ सन्त अधिकारी की स्थाई व्यवस्था है।

करह स्थान पर तो लगभग सहस्त्र से अधिक गायें हैं। अन्यत्र मन्दिरों पर भी दो चार गायों की स्थाई व्यवस्था चल रही है, जो केवल महाराज जी के कल्प सिद्धि का ही प्रत्यक्ष प्रमाण है।

पूज्य श्री महाराज जी का संकल्प हुआ, गुरुदेव श्रीधाम वृन्दावन एवं वहाँ के सुप्रसिद्ध सन्त श्री बाबा हरिदास जी, श्री उड़िया बाबा महाराज में श्रद्धा रखते थे। वहाँ सियपिय मिलन भी हुआ। वह दिव्य आयोजन लोक में अलौकिक विभूति के आनन्दानुभव का सुअवसर, उसी महोत्सव के पश्चात् उसी समय वहाँ मन्दिर निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ। पूज्य श्री बड़े महाराज जी श्रीधाम वृन्दावन के सिद्ध तपस्वी सन्त भूषण श्री उड़िया बाबा महाराजश्री एवं बाबा हरिदासजी महाराज दोनों ही विभूतियाँ जो प्रथम विशाल यज्ञ में करह धाम पधार चुकी थीं, उन्हीं के चरणों में श्रद्धा का यह सुपरिणाम हुआ कि दोनों ही सिद्धों के आश्रम के समीप दावानल कुण्ड पर परमहंस आश्रम के पीछे लगभग एक हैक्टेयर में विशाल मन्दिर, जिसमें करह धाम के सिद्ध सन्तों की प्रतिष्ठा है, निर्माण कराया। आज यह स्थान श्रीधाम वृन्दावन का दर्शनीय प्रतिष्ठित एवं सिद्ध स्थानों में से एक है।

महाराजश्री के चिंतन में लम्बे समय तक किसी धारणा में समाधि स्वरूप दर्शन में विचार आता रहा, अन्त में उसका प्रकटीकरण परमहंस आश्रम गोकुल के रूप में हुआ। संकल्प सिद्ध तो था ही, आनन-फानन में योजना कार्यान्वित हुई। परमहंस जी महाराज पूज्य श्री बड़े महाराज जी के दिव्य जीवन में आ चुका है। महाराज श्री के जीवन का यह अन्तिम निर्माण

है जो रमणरेती गोकुल एवं समस्त बृजधाम का एक अद्वितीय स्थान बनकर विजयपताका के रूप में आप्रलयान्त दर्शन देकर भावना को उर्ज्जावित करता रहेगा।

महाराजश्री उसमें विशाल उद्यान, मन्दिर के सम्मुख पुष्पोद्यान एवं शास्त्रानुकूल विधान के अनुसार साकेत की छटा अमर बनाकर छोड़ गए हैं, जो प्रलयपर्यन्त उनकी अखण्ड भक्ति प्रेम के ध्वजरूप में सभी की दृष्टि को अपनी ओर आकर्षित कर दिव्य प्रेरणा देती रहेगी।

*****

//श्री गुरुदेवाय नमः//

"सांक नदी में घिरे बालक को जीवन दान"

सद्यत्स्पृशति माणिक्यां यद्यत्पश्यति चक्षुषा।
स्थावराण्यपि मुच्यन्ते किं पुनः पामरा जनाः॥

(अर्थात गुरुदेव जिसको हाथों से छू देते हैं, जिस-जिस को आंखों से देख लेते हैं, जिसकी किंचित याद भी कर लेते हैं वे वृक्ष इत्यादि जड़ भी बंधन से छूट जाते हैं। फिर उनके संपर्क में आने वालों का क्या कहना, वे चाहे जैसे बने रहें, उनका कल्याण तो हो ही जाएगा।)

जन्म लेते ही जीव पृथ्वी का स्पर्श होते ही माया में लिपट जाता है। प्रारब्ध कर्मों से विवश बना हुआ गुरुदेव की शरण में जाने से डरता है,

अपना समर्पण करने में हिचकता है, थोड़ी सी मुसीबत आते ही घबरा जाता है परंतु पतिव्रता पत्नी की तरह जिसका शरणागति का भाव गुरुदेव के चरणों में अचल अटल हो जाए उसके सुख-दुःख की चिंता तो स्वयं गुरुदेव करते हैं। जीव अगर अविश्वास न करे, सन्देह न करे तो उनकी तो दृष्टि ही सृष्टि है। वे क्या नहीं कर सकते, अचर को चर और चर को अचर कर सकते हैं।

घटना गुरु पूर्णिमा के अवसर की है, कभी-कभी तो इस अवसर पर खूब वर्षा हो जाती है कभी छुट-पुट वर्षा कभी बिल्कुल ही नहीं होती। आज से लगभग 40 वर्ष पुरानी बात है, उस समय करह स्थान पर जाने के लिए पक्की सड़क की तो बात क्या, साफ पगडंडी भी नहीं मिलती थी। अज्ञात अपरिचित व्यक्ति को पहुंचने के लिए प्रायः बहुत कष्ट उठाना पड़ता था। घनघोर वर्षा हुई सांक नहीं अपने पूरे उफान पर थी। एक बालक नदी के बीच में एक चट्टान पर खड़ा हो गया। थोड़ी ही देर में समुद्र जैसा टापू बन गया, चारों ओर पानी ही पानी और रात का अंधेरा घना होने लगा। अपने को सब प्रकार से असहाय मानकर बालक ने हृदय से श्री महाराज जी का स्मरण किया, उधर श्री महाराज जी ने सहसा अपने निवास पर सबसे कह दिया। हमें कोई छोड़े नहीं, किबाड़ बंद कर लिए। अंदर कमरे में बंद हो गए। बाहर कुछ भक्त सेवा में रह गए इस प्रकार रात व्यतीत हुई। बालक ने महाराज जी के दरवाजे पर आकर साष्टांङ्ग प्रणाम की, तुरन्त पट खुल गए, महाराज जी ने सहसा पूछा कैसे आ गए। डबडबाई आंखों से रुंधे कंठ से बोला महाराज जी आप ही तो गोदी में लेकर किनारे पर छोड़ गए और कहा तुम सीधे चलो हम आ रहे हैं, यहां पर आकर दर्शन करता हूं कि आप तो यहां पहले से ही विराजमान हैं। महाराज जी का स्थान "वोलो श्री गुरुदेव भगवान की जय" से गुंजायमान हो गया।

*****

"भाग्य की रेख पर मेख"

मुन्ना पंडित को पुत्र दान

अवश्यमेव मोक्तव्यं, कृतं कर्म शुभा सुभम्

चाहे कोई कितना ही बड़ा पंडित, ज्ञानी, ध्यानी, तपस्वी, तेजस्वी हो लेकिन पहले किए हुए कर्मों का भोग अवश्य भोगना ही पड़ेगा। यह चराचर जगत उन्हीं की प्रेरणा से प्रेरित होकर समस्त कर्मों में लगे हुए हैं और की तो बात क्या बड़े-बड़े देवता इन्द्र, वरुण, कुबेर, लोकपाल कोई भी कुछ करने में समर्थ नहीं हैं। काल पाकर संयोग होने वाला या होने वाला योग अवश्यंभावी है। जैसे हाथी पीलवान के, घोड़ा सवार के, नथा हुआ बैल किसान के आधीन है उसी प्रकार यह प्राणी प्रारब्ध के अधीन है। उन्मुक्त हुआ हाथी, घोड़ा, बैल, भैंस एक बार बंधन तोड़कर भाग सकते हैं लेकिन मनुष्य को भवितव्यता बंधन तोड़ना सदा सर्वदा असंभव है।

करह स्थान के पास ही बमूर बसई नाम का एक गांव है। वहां के पंडित मुन्नालाल जी के एकमात्र इकलौता बेटा था, उसे संस्कृत अध्ययन के लिए वृंदावन रख दिया। कुयोग से बीस वर्ष की अल्पायु में ही उसकी मृत्यु हो गई, उसके बाद कोई संतान नहीं हुई। जितना दुःख पंडित जी को हुआ उतना ही दुःख पूरे गांववासियों को हुआ पर कोई कुछ कर ही क्या सकता था। भवितव्य के विधान को मैटने में भगवान एक बार भले ही समर्थ न हों लेकिन उनके साधक उनके प्रेमी संत भक्त गुरुदेव वे सब कुछ करने में समर्थ हैं, इसलिए कबीर बाबा ने कहा -

कबिरा ते नर अन्ध हैं, गुरु को कहते और।
हरि रूठें गुरु ठौर है, गुरु रूठें नहिं ठौर॥

पलटू बाबा कहते हैं -

"करता करे न करि सके, गुरु करे सो होय।"

और संत गुरुदेव के लिए कहा -

राम का मिलना सहज है, संत का मिलना दूर।
पलटू संत मिले बिना, राम ते परै न पूर॥

इस दुःख से दुःखी समस्त गांववासियों के साथ जैसे कोई गाय हाल के जन्म दिए बच्चे को मिलने के लिए रंभाती हुई दौड़ती है। उस माँ को लिए सभी गांव वाले महाराज जी के चरणों में आये, प्रार्थना की, श्री महाराज जी ने कहा, प्रार्थना कर जाओ, गुरुदेव सब कृपा करेंगे। कुछ समय पश्चात एक विलक्षण आश्चर्य हुआ, जो माँ स्त्री धर्म (मासिक) से भी मुक्त थी। पर श्री महाराज जी की कृपा ने प्रकृति के दुर्भेद्य कपाटों का ताला तोड़कर उसकी कोख खोल दी। आज से चार वर्ष पहले सुंदर बालक का जन्म हो गया। महाराज जी की इस कृपा का, महिमा का सर्वत्र गुणगान हुआ, हो रहा है, होता रहेगा। संत कहते हैं - निःसंदेह संत भगवन्त से बड़े हैं।

संत बड़े भगवन्त तें, कह श्रुति संत विचार।
एक भक्त के चरित पर, नारायण बलिहार॥

*****

"अन्धी कन्या को नेत्र ज्योति देना"

बीत राग भय क्रोधैर्मुनिभिर्वेद पारगैः।
निर्विकल्पोदयं दुष्टः प्रपञ्चो पशमोडह्यः॥

जिन संत भक्तों का चिक समस्त राग भय और क्रोध चले गए हैं। अंतःकरण सदा निस्काम भाव से प्रपंच शून्य हो गया, वह प्रत्यक्ष ब्रह्म है। भगवती श्रुति एवं पुराणों में आता है -

समाधिमथ कर्माणि मा करोतु करोतु वा।

हृदयेनास्त सर्वास्थः मुक्त एवातमाशयः ॥

सच्चा आराधक अपने ऐसे सवरूप से कुछ भी आराधन करे, या न करे वह अपनी आस्था के बल भक्त है, ईश्वर स्वरूप है। ऐसे ब्रह्म स्वरूप संत प्रत्यक्ष रूप से जगत के सामने अपने भगवदीय स्वरूप की व्याख्या वाणी से नहीं व्यवहार में प्रत्यक्ष करके दिखलाते हैं। इन प्रेमी साधकों की भावमयी दृष्टि अपने अनुसार नूतन सृष्टि करने में समर्थ है। वे चाहें तो पत्थर से कमल खिला सकते हैं। विनय पत्रिका में गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं -

सिला सरोरुह जागो।

महाराज श्री के कृपापात्र लोहिया बाजार ग्वालियर निवासी सेठ कालीचरण, तोताराम जन्म से ही महाराज जी के संपर्क में रहे, महाराज जी के प्रति उनकी श्रद्धा एवं महाराजश्री के ऊपर उनका अनुराग आशीर्वाद खूब रहा, कई बार महाराज जी उनके घर पर रुके, उनके घर को ही भक्ति कानन बना दिया।

उनके एक सिंधी सेठ मित्र थे। एक बार वह उनके यहां आए। उनके साथ एक जन्मजात अंधी कन्या को साथ लेकर आये, महाराजश्री के चरणों में प्रणाम की, परिवार सहित महाराज श्री से कृपा की कामना की। महाराज श्री ने सहज रूप से कहा पटिया का जल नित्य चरणामृत लेय और नित्य दो बूंद नेत्रों में डाले, जिसे चिकित्सा संसार में कहीं से कुछ भी आधार नहीं था, पल भर की गुरुकृपा ने उसका जीवन ज्योतिर्मय बना दिया। उनकी इस कृपा से उनके "कर्तुमकर्तु अन्यथा कर्तुम समर्थ" भगवान के रूप की व्यवहारिक व्याख्या की, इसका इतिहास हमारे आपके और बेटी के न रहने पर भी अमर बना रहेगा।

*****

बड़े उत्सव में खोई हुई स्वर्ण जंजीर का मिलना

लहरी ढूंढै नीर को, कपड़ा ढूंढै सूत।
जीव जु ढूंढै ब्रह्म को ये तीनों ऊत के ऊत॥

लहर पानी ही तो है, कपड़ा सूत ही तो है, जीव ब्रह्म ही तो है, किन्तु मल, विक्षेप, आवरण आ जाने से पृथकता का अनुभव होता है। जो प्रभुमय हैं, जिनका अन्तःकरण सदा-सर्वदा अपने प्रेमास्पद प्रभु से जुड़ा है उनके लिए प्रभु की सत्ता से भी अधिक सामर्थ्य प्राप्त हो जाती है। उनके लिए न तो कुछ असंभव होता है न कुछ अपरिचित। वे सबमें तथा सब उनमें हो जाते हैं।

फाल्गुन कृष्णपक्ष प्रतिपदा से अष्टमी तक महाराजश्री का सबसे बड़ा उत्सव होता है। लाखों नर-नारी प्रतिदिन आते हैं। ऐसी अपार भीड़ में अपने को संभालना भी सहज काम नहीं। यद्यपि उत्सव के पर्चो में महाराजश्री प्रतिवर्ष ऐसी लेखी सूचना भी देते रहे हैं कि कोई मैया गहने पहनकर न आवें। फिर भी अपने को सजाने-संवारने की, सुंदर दिखने की प्रवृत्ति सहज होती है, संयोग से एक बहन अपनी सोने की जंजीर खो बैठी। सर्वत्र निराशा ही निराशा। इतनी अपार भीड़ में उसके मिलने की क्या कल्पना। बहन का ससुराल वालों से भय, गरीब माता-पिता की चिंता का अनुमान उसे निरंतर रुला रहा था। हिचकी रोके नहीं रुक रही थी तभी एक सज्जन रास्ते से उठाकर लाए, महाराज श्री को सौंप दी। महाराजश्री ने उस बहन को जंजीर नहीं, उसके भावी दुःख के पहाड़ को सदा के लिए उतार दिया। यह उनकी कृपा करुणा का चमत्कार है।

*****

जादौन बालक की वाणी

मूकं करोति बाचालं पंगु लंघयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्द माधवम्॥

"ता कहँ प्रभु कछु अगम नहिं जा पर तुम अनुकूल"

यों तो कथा प्रवचनों में निरन्तर सुन रहे हैं। पढ़ रहे हैं कि परमात्मा की कृपा हो जाए तो गूंगा बोलने लगता है, अंधा देखने लगता है, पैरहीन बड़े-बड़े पहाड़ों पर चढ़ सकता है, कहने-सुनने में यह कथ्य तथ्य सदा ही है, किन्तु प्रत्यक्ष देखने का सुयोग शायद अपवाद रूप से भले ही कहीं दिख जाए, मिल जाए अन्यथा प्रत्यक्ष देखने में नहीं आता कि किसी गूंगे को वाणी मिल गई हो।

सायंकाल तीन बजे से महाराजश्री के कमरे में आगन्तुकों का सत्कार, उनकी प्रार्थना पुकार पर कृपा अथवा कोई न कोई कथा सत्संग का क्रम निरंतर रहा। कभी कोई अपरिचित आ गया, अकिंचन आ गया तो उसे आत्मीय संबंधी से भी अधिक सम्मान देते थे।

एक बार सबलगढ़ क्षेत्र से ठाकुर जादौन अपने बच्चे को साथ लेकर आए। महाराज श्री के पूछने पर उन्होंने अपनी व्यथा महाराज श्री के चरणों में रखी - "इकलौता बेटा है।" सब जगह संभव इलाज करवाए कहीं कोई नतीजा नहीं निकला। लगभग घंटे भर तक कमरे में एक अजीब खामोशी सन्नाटा छा गया, जादौन भी प्रतिष्ठित व्यक्ति, उनकी पीड़ा भी उनकी शक्ति से बहुत अधिक। चलने की मानसिकता में हाथ जोड़कर खड़े हुए बोले - महाराज जी! अब क्या करें। सरकार बोले - वो तो अभी बोलेंगे। बालक से बोले - बोलो - जै जै सीताराम। बच्चा तुरन्त बोला - जै-जै सीताराम, बस इस चिकित्सा से वह लगभग जीवन निर्वाह की स्वतंत्र पात्रता रखकर ऐसा वक्ता बना कि व्यवसाय से व्याख्याता बन गया है। इस प्रकार महाराज श्री की कृपा के चमत्कार प्रभु से कम प्रतीत नहीं होते।

*****

डॉ. सा. श्री आनंद सिंह तोमर का गुप्त संकल्प

"प्रमाता च प्रमाणं च प्रमेयं प्रमिति स्तथा।
यस्य प्रसादात्सि ध्यन्ति तासिद्धौ किमपेक्ष्यते॥"

(जिसकी कृपा से प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय इन तीनों की सिद्धि होती है उसकी सिद्धि के लिए किस प्रमाण की आवश्यकता है।

बोधवान गुरु-शिष्य का अन्तःकरण एक होकर अद्वैत में प्रतिष्ठित होता है। कभी-कभी ऐसा प्रत्यक्ष देखने मिला। एक ही विचार के दो साधक, दोनों ने अपने-अपने भाव अलग-अलग लिखे किन्तु मिलान करने पर दोनों एक ही पाए गए।

डॉ. श्री आनंद सिंह जी तोमर, मुरार (ग्वालियर) में 'सीताराम होम्योपैथी' बड़े विशाल रूप से होम्योपैथ चिकित्सा सेवा दे रहे हैं। महाराजश्री की उन पर बड़ी कृपा है। श्री बड़े महाराज श्री से कृपा प्राप्त कर आज तक बराबर सेवा दे रहे हैं।

एक बार स्थान पर आए परिक्रमा करने के पश्चात् पटिया पर आकर प्रणाम किया। कुछ क्षण रुके मन में विचार आया, महाराज श्री की सेवा अबकी बार पचास हजार रुपयों से की जाए। परिक्रमा की, प्रसाद लिया, चले गए। चार महीने गुजरे, सेवा में कुछ नहीं किया। सहसा महाराज श्री ने कहा - संकल्प की सेवा तो पूरी कर देते। डॉ. साहब भौंचक्के रह गए। पूछा - महाराज जी। कैसा कौन सा संकल्प? महाराज जी बोले - क्यों? तुमने पटिया पर पचास हजार का संकल्प नहीं लिया?

विस्मय एवं निष्ठा तथा महाराज श्री के अन्तर्यामी रूप का प्रसाद पाकर धन्य हो गए।

*****

"सियपिय मिलन के वाद खेरागढ़ हनुमान मंदिर पर पुजारी को महाराजश्री का दर्शन"

श्रीमद् भागवत में श्री शुकदेव जी कहते हैं -

"वृंदावनं परित्याज्य पादमे कं न गच्छति।"

भगवान वृंदावन को छोड़कर एक कदम भी कहीं नहीं जाते, वास्तविकता यह है कि भगवान तो भक्त के अधीन हैं, वे स्वयं कहते हैं -

"अहं भक्त पराधीन"

यदि भक्त प्रेमी न चाहें तो भगवान कैसे जा सकते हैं। भगवान तो भाव के ग्राहक हैं और भक्त के लिए अनुग्रह विग्रह हैं। भक्तों की भावना और उनके प्रेम के वश होकर वही व्यवहार करना पड़ता है। आचार्यों ने प्रेम के स्वरूप के बारे में कहा -

सर्वथा ध्वंस रहितः सत्यपि ध्वंस कारणे।
यद्भाव बंधनंयूमोः तत्प्रेम परकीर्तितः॥

अर्थात प्रेम में नाश का कारण उपस्थित होने पर भी जो प्रेमियों प्रेमास्पद दो का भावमय बंधन सदा सर्वदा अविनाशी होता है, उसका कभी नाश नहीं होता। इसको संसार नहीं जानता, केवल प्रेमी और प्रेमास्पद अर्थात भक्त और भगवान दो ही जान सकते हैं।

प्रेमी बिन या प्रेम की, और न जाने सार।
नारायण बिन जौहरी, जैसे लाल बजार॥

खेरागढ़ हनुमान मंदिर की झांकी है। महाराज श्री का चैत्र शुक्ल पंचमी संवत् 2061 को करह स्थान पर शरीर को त्यागकर साकेत धाम पधारना हुआ हनुमान मंदिर पर खेरागढ़ पुजारी महाराज जी के पलंग के पास गए और महाराज जी का दिव्यदर्शन उनको पलंग पर हुआ। इसको जगत की सत्यता असत्यता से कोई प्रयोजन नहीं होता, ये तो प्रेम की महिमा है,

गुरुदेव की चिन्मयता का प्रमाण है।

विधि निषेध श्रुति वेद की, मेड़ देत सब मेट।

*****

खेरागढ़ वाले पं. नारायण दास और श्री महाराज जी

ज्ञानमेव तुलतिच्च तुलायां प्रेम नैव तुलितच्च तुलायाम।
दान मेव तुलितच्च तुलायां कृष्ण नाम तुलितं न तुलायाम॥

अर्थात ज्ञान और दान दोनों को तराजू में तौल लिया गया किन्तु भगवत प्रेम और भगवान के नाम को किसी रचनाकार की तुला पर तौला नहीं जा सका, ऐसी स्थिति आती है जहां अनिर्वचनीयता के अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं रहता -

प्रानभये कान्हमय, कान्हभये प्रानमय।
हिय में न जानि परै, प्रानहै कि कान्ह है॥

मैया कौशल्या के वात्सल्य स्नेह में भी यही अपूर्व झांकी है, एक ओर नहला-धुला कर भगवान को बालभोग कराके पलने में सुलाकर मंदिर में आती हैं और देखती हैं कि मंदिर में वहीं लाला विराजमान है - जिस बुद्धि ने ब्रह्म को बेटा बनाया, लेकिन प्रेम की दृष्टि में सृष्टि में उनकी मती में भ्रम आ गया -

इहां-उहां दुइ बालक देखा।
भतिभ्रम मोर कि आनविशेखा॥

पर तथ्य यह है कि जब पुतली ही वही बन जाय फिर सृष्टि में देखने वाला उसे ही तो देखेगा।

कांकर, पाथर ठीकरी भये आरसी मोहि।

बलिहारी इन नयन की जित देखूं उत चोर॥

प्रेम भी महत्तम दशाओं में से एक है।

महाराजश्री के प्रथम खेरागढ़ में दर्शन करने के बाद वहां के पं. नारायणदास जी महाराज श्री के ऊपर बलिहार हो गये, दर्शन करके सारी सुध बुध खो बैठते थे, महाराज श्री के पधारने पर घर में घी के दीपकों से दीवाली सी जगर-मगर करते थे।

दुर्योग से पं. का एकमात्र इकलौता बेटा चला गया, महाराज श्री उनके घर पधारे तो एकमात्र बेटे की मौत का दुःख उस पिता के चेतन व्यवहार से न जाने कहां उड़ गया। वे तो सदा की तरह घी के दीपक जलाकर अगवानी करते हैं, पुनश्चः महाराज जी को वहीं विराजमान करके इस बालक के कृत्य के लिए जहां भी गये महाराज श्री को आगे पाया, घर पहुंचकर देखा तो जहां छोड़ गए थे वहीं विराजे हुए हैं अपना अमृतोपदेश बरसा रहे हैं। कुछ समय पश्चात पं. को पुन- भव्य पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई।

*****

एक का कल्याण करना ही अपना लक्ष्य

सर्वजन कल्याण भावना

"मत्त्यवितारस्तुहि मर्त्य लक्षणं रक्षो वधायैव न केवलं विभौ"

प्रभु का इस धरती पर आने का प्रयोजन केवल राक्षसों को मारना ही नहीं है, यह काम तो उनके संकल्प मात्र से ही हो सकता है। यदि उनके संकल्प में किंचिन्मात्र क्रोध का भाव आ जाए तो संसार की सत्ता ही समाप्त हो जाए, और तो और महाप्रलय हो जाए, उस शक्तिमान को केवल दुष्ट

दमन के लिए यहां आना पर्याप्त नहीं है। उनके अवतार का प्रयोजन नर रूप में आने का मतलब धरती पर मानवता की स्थापना है। मानवीय मर्यादाओं की आदर्श प्रतिष्ठा है, जिसका यथार्थ प्रयोजन लोकमंगल है। सर्वजनहिताय का भाव है।

इस दिव्य भाव का उदय प्रभु रूप में ही संभव है, जहां अपने से अलग कोई है ही नहीं या यह जो दृश्यमान स्थावर जंगम जगत है वह सब मेरे प्रभु का ही प्रत्यक्ष स्वरूप है।

सीयराममय सब जगजानी।
करहुं प्रनाम जोरि जुग पानी॥

मेरा कर्म-धर्म इसी में परिपूर्ण है कि जो सामने है वह समस्त रूप मेरे प्रभु के स्वयं के हैं।

जड़ चेतन जगजीव जत सकल राममय जानि।
वन्दउं सबके पद कमल सदा जोरि जुग पानि॥

महाराजश्री का यह पुनीत भाव चित्रकूट में प्रत्यक्ष देखने को मिला। आज से 9-10 वर्ष पूर्व श्री बड़े महाराज श्री का सिय-पिय-मिलन महोत्सव चित्रकूट धाम में हुआ। उस समय रीवा दरबार से संबद्ध रिटायर्ड कलेक्टर माननीय एम.पी. सिंह साहब चित्रकूट विकास प्राधिकरण के अध्यक्ष थे। उन्होंने जब इस विशाल महोत्सव को देखा तो सभी संबंधी भी बुलवा लिए। सभी आश्चर्य में ऊब-डूब रहे थे। अंत में सबने एक स्वर से यही स्वीकार किया कि जब इस धाम की प्रतिष्ठा कराई गई होगी तब का इतिहास भी ऐसा नहीं है जो महाराज श्री ने यहां करके दिखलाया। हजारों टीन शुद्ध घी, लगभग हजार पांच सौ मन और पांच सौ बोरी चीनी के लड्डू। उत्सव भर आठों दिन निरंतर क्रम चला, जिसे देखकर सुनकर सभी को हैरानी हुई, विस्मय हुआ। जहां देखो तहां यही चर्चा व्याप्त थी। राज-परिवार की माताएं, पुरानी आयु वालीं बहन -बुआ टीकमगढ़ परिवार

भी सम्मिलित हुआ। समस्त भारत वर्ष के सिद्ध महात्मा पधारे, वहीं कुछ ऐसे बुद्धिमान भी आए जिन्होंने यह प्रश्न किया ? इतना विपुल सम्पदा खर्च कर क्या मिला ?

श्री महाराजश्री का उत्तर था, इस महोत्सव के प्रसाद, आशीर्वाद से यदि एक व्यक्ति का मन भी भगवान की ओर हो गया तो जो भी प्रभु ने हमसे कराया वह सफल हो गया।

एक का मन भी ईश्वरोन्मुखी बन गया तब श्री महाराज जी को इतनी प्रसन्नता देने वाला हो तो लोक कल्याण की भावना रखने वाला ऐसा दिल शायद अपवाद को भी नहीं मिलेगा जो एक का कल्याण हो गया तो हमारा सारा श्रम संपत्ति सफल हो गया। ऐसा पुनीत विचार रखता हो, जन कल्याण को ऐसी उदात्त भावना हो।

उनकी यह अद्‌भुत निष्ठा कि अपने को सबसे छोटा मानकर, तुच्छ मानकर सबको अपने से बड़ा मानकर उनकी सेवा में अपना पूर्ण समर्पण।

*****

अनेक साधकों की सृष्टि

ज्ञानयोग पराणां तु पाद प्रक्षालितं जलम्।
भाव शुद्ध यर्थम ज्ञानां तत्तीर्थ मुनिपुंगव॥
यद्यत्स्पृशति पाणिभ्यां यद्यत्पश्यति चक्षुषा।
स्थावरण्यापि मुच्यन्ते किंपुनः पामरा जनाः॥

अर्थात ज्ञानयोग परायण पुरुषों के पादप्रक्षालन का जल अज्ञानियों की भावशुद्धि के लिए तीर्थ है।

ऐसे महात्मा जिस-जिसको हाथों से छू देते हैं, जिस-जिसको आंखों

से देख लेते हैं वे चाहे भ़ले ही स्थावर (जड़) पेड़ पौधे ही क्यों न हों वे भी बंधन से छूट जाते हैं, फिर पामर जनों का कहना ही क्या ? वे तो पाप मुक्त हो ही जावेंगे।

ऐसे संत भक्त के समीप रहने से पाप कर्म तो स्वतः छूट ही जाएंगे, निरंतर सत्संग के प्रभाव से कुछ न कुछ साधन बनने ही लगेगा। उनके स्नेह आशीर्वाद का कण मिल जाए तो कुछ करना भी नहीं पड़ेगा, वही सब कुछ करा ही लेगा।

लक्ष्णोः फलं त्वादृश दर्शनं हि
जिह्वा फलं त्वदृश कीर्त्तनं च।
तन्वाः फलं त्वादृशस्पर्शनं हि।
सुदुर्लभा भागवता भवन्ति॥

ऐसे नर रूप नारायण का दर्शन ही नेत्रों का फल है, आप जैसों का कीर्तन ही जिव्हा का फल है, उनका स्पर्श ही शरीर का फल है। यह बिल्कुल ध्रुव सत्य है अतः ऐसे प्रभु रूप संतों का दर्शन पूर्व पुण्यों का परिणाम है।

पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न सन्ता।
सत्संगति संसृति कर अन्ता॥

इसलिए संतों ने संत को पारस से भी श्रेष्ठ कहा है।

पारस में अरु संत अधिक करमान।
वह लोहा सुबरन करे यह कर आप समान॥

अपने कर्मों से चाहे जैसा अधम प्राणी हो, जिसने कभी कोई शुभकर्म न किए हों, संतों के संपर्क में आते ही वह भी वंदनीय, अभिनंदनीय हो जाते हैं, सभी के सुपूज्य हो जाते हैं।

बड़ोखर हनुमान जी महाराज से भेंट कर श्री गुरुदेव का संकल्प भी वही मिला, जो हनुमान जी ने कहा - जाओ रामकथा और राम-नाम का

प्रचार-प्रसार करो। इस अभियान में गांव-गांव घूम-घूमकर रामलीला - रामकथा - भगवन्नाम कीर्तन की गंगा का पावन प्रवाह उन परिस्थितियों में जब निरंतर अकाल, भुखमरी, महामारी आदि का संकट था।

गरीबी एवं अशिक्षा देश में सबसे बदतर यहीं इसी क्षेत्र में थी। उस सबको, सत्संग प्रवाह प्रभाव से सतयुग एवं त्रेता में पहुंचा दिया। निरक्षर लोग भी मानस पाठी हो गए। देखकर आश्चर्य के अलावा और हाथ में कुछ न था। उनमें से एक दो पुराने बुजुर्ग क्षेत्र में अतिशय वृद्धावस्था में हैं, प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

रामलीला में महाराजश्री स्वयं स्वरूपों का उपटन, स्नान, बाल भोग, राज भोग आदि कराते थे। घर-घर में उनकी प्रतिष्ठा पधरावनी होती रही। वातावरण बिल्कुल सीय-राम मय हो गया। गांव-गांव मानस विनय नियमित चलने लगी। अब भी क्रम जारी है।

किन्ही का प्रारब्ध जाना नहीं जा सकता। श्री गंगाराम जी जो बागचीनी में पान की दुकान करते थे। महाराज श्री के संपर्क में आए तो महाराजश्री के साथ ही चले आए जहां महाराजश्री की कृपा प्राप्त हुई। श्री बड़े महाराज जी ने भी आशीर्वाद दिया। उनके स्नेह दुलार से बाद में वही श्री रामजी ब्रह्मचारी, रामजी शास्त्री नाम से सुविख्यात हुए।

साहित्य एवं व्याकरण से आचार्य किया। दर्शन का पूर्वार्द्ध हुआ। अनन्तर लखनऊ आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के द्वारा राम कथा का खूब प्रचार-प्रसार किया।

ऐसे सुविख्यात अनेकों साधकों की सृष्टि की जो धर्म स्थापना में अपना समर्पण करके महाराजश्री के द्वारा प्राप्त सदाचार, सधर्म की प्रतिष्ठा में सेवारत हैं।

*****

प्रेमियों से शाश्वत मिलन

स्वामी फतेकृष्ण वृंदावन

ब्रह्ममयी मायामयी है यह सारी सृष्टि।
ताकौ तैसी लखि परै जाकी जैसी दृष्टि॥

भगवान की लीला विचित्र है। संसार की सत्ता समान रूप से सबको समान अनुभव में आना चाहिए किन्तु ऐसा नहीं है। जिसके बारे में जिसकी जैसी दृष्टि है उसी के अनुसार संसार का प्रत्येक जीव, अणु, परमाणु उसी भाव में उसी रूप में प्रतीत होते हैं।

संत कहते हैं - दृष्टि भी लौकिक, शास्त्रीय और दैवी यह तीन हैं। मूर्ति दर्शन करने के बाद अमुक पत्थर प्रतीत हो तो यह लौकिक दृष्टि है, यह प्रभु का स्वरूप है यह शास्त्रीय दृष्टि है। यही साक्षात् सच्चिदानंद विराजे हैं यह दैवी दृष्टि है।

किसी नारी शरीर को देखकर मांस, मज्जा, भेद, अस्थि या बनावट पर दृष्टि है तो लौकिक दृष्टि है। हमारी माता या बहन हैं यह शास्त्रीय दृष्टि है। यह साक्षात् भगवती सीता-राधा हैं यह दैवी दृष्टि है।

इसी प्रकार तीर्थवास भी तीन ही प्रकार का है। शरीर से, वाणी से और मन से। प्रथम तो शरीर से ब्रज में निवास, फिर वाणी से ब्रज रस का आस्वादन, इसके बाद महावाणी (अन्तर से) अष्ट सखा या ब्रजरसिकों के पदों का गान, अस्वादन यह वाणी से ब्रजवास है, मन भी ब्रज में लगा है यह मन से ब्रजवास है।

श्री वृंदावन धाम तो नित्य है, चिन्मय है। यहां निरंतर श्रीकृष्ण लीला के राससुख का अधिकारी बनता है। इस वृंदावन तक सामान्य कौतुकी जनों की पहुंच नहीं होती। साधक का प्रवेश नहीं, साधक जाएगा, कुछ दिन बाद वापस लौट आएगा। फिर वृंदावन रहना तो और भी कठिन है। क्योंकि गुण

विहीन धरा कहीं नहीं, जो जिस गुण में प्रवृत्त रहता है उसकी प्रकृति उसे उधर ही ले जाकर डुबा देती है इसलिए असली वृंदावन तक उनकी पहुंच नहीं बन पाती। वृंदावन में आज भी ऐसे सिद्ध संत हैं जो नित्य धाम के आनंद में डूबे रहते हैं और तो और बांके बिहारी का दर्शन भी नहीं कर पाते।

महाराज श्री स्वामी फतेकृष्ण जी को ऐसा ही श्रीकृष्ण लीला का अन्तरंग पार्षद मानकर सदा पूजा करते रहे। उनमें दिव्यानुभूति का भाव सदा-सर्वदा बनाए रहे। न केवल उन्हीं के बल्कि उनके समस्त घर परिवार एवं लीला परिवार को प्रभु का अन्तरंग प्रेमी पार्षद मंडल मानकर शास्त्रीय एवं सन्त भक्त शैली से उनका पूजन सम्मान करते रहे।

महाराजश्री के साकेतवासी होने पर एक वर्ष तो श्री महाराजश्री का उत्सव नहीं हो सका। स्थान का परिवार उनके विछोह को बर्दास्त ही नहीं कर पाया। किंकर्तव्य विमूढ़ बना रहा। पिछले दो वर्ष से श्री गोकुल धाम में सिय-पिय-मिलन महोत्सव का आयोजन किया गया। यहां की विचार धाराओं की विविधता, उनको निर्णय लेने में बाधक रही या योग संयोग जो भी हो किन्तु स्वामी जी ने इन्हीं दिनों जो प्रोग्राम तय कर रखे थे, दोनों वर्ष लौट-पलट कर बैठे स्वामी जी को बड़ी निराशा हुई, अन्त में महाराज श्री ने उनसे अर्द्ध निद्रा की अवस्था में प्रार्थना की, कहा गोकुल लीला करो। वे तुरंत पहुंचे श्री वैष्णवदास जी आजकल वहां के अधिकारी हैं, उनसे सम्पूर्ण विवरण कह सुनाया।

तात्पर्य यह है, तद्रूपता प्राप्त करने वाला प्रेमी, प्रेमास्पद से पृथक नहीं वह तन्मय ही है।

"ऐसे परस्पर दोउ चकोर दोउ चन्दा"

दोनों ही विभूतियों को पादपद्मों में सदा प्रणाम।

*****

ब्राह्मण भक्ति के अनूठे आदर्श

विपद् घन ध्वान्त सहस्त्र मानवः,
समीहितार्थार्पण कामधेनवः।
अपार संसार समुद्रसेतवः
पुनन्तु माँ ब्राह्मण पादरेणवः॥

"अर्थात मुझे ब्राह्मण देवताओं की पतितपावन चरणरज पवित्र करे जो विपत्ति रूप घोर अंधकार के लिए सहस्त्रों सूर्यों के समान है, अभीष्ट पदार्थों को अर्पण करने के लिए कामधेनु के समान है और अपार संसार सेतु के समान है।"

वर्तमान संदर्भ में यह आदर्श अर्थहीन सा हो रहा है, प्रतीत होता है कालान्तर में यह केवल पुस्तकों में ही लिखा रहेगा। देखने को तो अपवादस्वरूप श्री महाराजश्री जैसे विरले ही होंगे।

स्थान के उत्सवों में निमंत्रण करके बुलाए जाने वाले ब्राह्मण देवताओं की संख्या 100 से लेकर 200 या 250 तक रहती थी लेकिन सन् 1980 के बाद तो संख्या में बेतहाशा वृद्धि होने लगी। सं. 2003 में वे 651 (छः सौ इक्यावन) हो गए। महाराज श्री से पूछा गया, क्या किया जाए तो उत्तर दिया, कोई निराश न जाए कहीं न कहीं लगाओ, मानस गान, हनुमान चालीसा, भक्ति चौपाई, गायन सब अखण्ड चलते हैं, कहा बंटवारा करके कहीं भी रखो सबका वरण होना चाहिए।

महाराज श्री का भाव था, इस रूप से हमारे यहां वाशिष्ठादि महात्मा पधारते हैं। सभी की सेवा और विदाई ऐसी अभूतपूर्व होती रही कि कोई अपने सगे दामादों की भी नहीं कर सकता?

एक बार किसी ने कहा - महाराज श्री कुछ ब्राह्मण देवता ऐसे भी पधारे हैं, जिनका यज्ञोपवीत संस्कार ही नहीं हुआ है। आप बोले बड़ी

प्रसन्नता की बात है, तुम सब व्यवस्था करो, जिनका जनेऊ संस्कार नहीं हुआ है, सबका कराओ, जो खर्चा होगा हमारे राम करेंगे।

यह सब उनके इस चिन्मय विग्रह से भगवान की लीलाओं का पूर्ण दर्शन था जो सबके सामने रहा। गो. जी ने कहा –

शुद्ध सच्चिदानंदमय कन्द भानुकुलकेतु।
चरित करत नर अनुहरत संसृतिसागर सेतु॥

अपने व्यवहार के द्वारा सामान्य जन संस्कारों के लिए ऐसी लीलाएं कीं – श्रीराम रथारूढ़ हो रहे कैसे –

''बैठे राम द्विजन्ह सिर नाई।
शंकर जी भी सिंहासनासीन हुए तो।
बैठे शिव विप्रन्ह सिरनाई॥''

अनेक अवसरों पर महाराज श्री ने इस मर्यादा पालन में पंक्तिवद्ध बैठे ब्राह्मणों के चरण धोए चरणामृत पिया।

प्रथम सं. 2001 के बड़े यज्ञ में अनन्त श्री शास्त्री जी जगन्नाथ प्रसाद की सार्वभौम। उड़ीसा ने आवेश में आकर कुछ दिया। पता लगने पर आए और शास्त्री जी के चरणों के सिर रखे रह गए। ऐसी अद्‌भुत विनम्र निष्ठा को देखकर शास्त्री जी भी स्वयं रो पड़े। महाराज श्री ने हाथ जोड़कर बार-बार यही कहा।

''चलिए विप्र उर कृपा घनेरी।''
कृपा कोप बध बधव गुसांईं।
मोपर करेहु दास की नांईं॥

*****

जेल में कैदियों को प्रसाद पहुंचाना

अपराधी में भी अपने आराध्य का दर्शन

उमा जे रामचरनरत् विगत काम मद क्रोध।
निज प्रभु मय देखहिं जगत केहिसन करहिं विरोध॥
मैं जानउं निज नाथ सुभाऊ।
अपराधिहुं पर कोह न काऊ॥

अन्यत्र सर्वत्र तो कृपा वायु की तरह आती है, जाती है। यही क्रम रहता है, किन्तु प्रभु श्रीराम तो कृपा करुणा के सागर हैं, अपने मूल अधिष्ठान को छोड़कर कृपा करुणा कहां जा सकती है ? कैसे जा सकती है। उन्हें नहीं छोड़ सकती।

सच्चा साधक, आराधक जिसका चिंतन-मनन, ध्यान-कीर्तन करता है, कालान्तर में तद्रूपता प्राप्त कर वह भी वही बन जाता है। जहां पराए पन का भेद ही नहीं रहेगा वहां पर कौन किससे क्या अन्तर मानेगा, कैसे विरोध कर सकेगा।

अयं निज परोवेत्ति गणना लघु चेतसाम्।
उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

यह मेरा है, यह दूसरे का ऐसा हीन चित्त वाला अल्पधी चाहे समझे, किन्तु जिनका चरित्र श्रीराम की उदारता से निर्मित होता है उन्हें सारा ब्रह्माण्ड ही अपना परिवार है।

पढ़ने, बोलने के लिए अनेकों उदाहरण गाथाएं भरी पड़ी हैं किन्तु प्रत्यक्ष रूप से महाराज श्री का स्वरूप भी यही है।

श्री राममंदिर में से चोरों ने चोरी की किन्तु तत्काल समीप ही नदी में पकड़ लिए गए। माल बरामद हुआ, दोनों को पुलिस ने बंद करा दिया। संयोग से जन्माष्टमी आ गई।

महाराज श्री ने पांच किलो आटा एवं पांच किलो धनिये के पंजीरी बनवाई। एक फलों का टोकरा जिसमें केला, सेव, पपीता, जामफल भरे हुए। आज्ञा हुई इन्हें देकर आओ ? पूछा गया किन्हें। महाराज श्री बोले उन दोनों चोर भगवानों को जो जेल में बंद हैं। आज हमारे का जन्म महोत्सव है। सभी खूब खाएंगे, गाएंगे, नाचेगें। उन्हें कौन देगा ? आज्ञा शिरोधार्य की गई, किन्तु पूछा ? महाराज जी इतनी मात्रा में क्यों ? वे इतना प्रसाद कब कैसे खाएंगे।

महाराज श्री ने करुणा में भरकर कहा। वे कैदी हैं, स्वतंत्र थोड़े ही हैं। इसमें से पहले जेल परिवार खा पी लेगा। शेष कुछ उन्हें भी मिल जाएगा। उनको पहुंचाकर ही आपने प्रसाद लिया।

ऐसी उदात्त भावना का आदर्श कहां ढूंढें।
ऐसो को उदार जग माहीं।
बिनु सेवा जो द्रवहि दीन पर.... ॥

*****

श्री वैष्णवदास जी के मन की बतलाना

जो वह एक न जानियां सबहिं ज्ञान-अज्ञान।
जो वह एकहिं जानियां सब अज्ञान है ज्ञान॥

भगवान को नहीं जान पाया तो जितना भी जाना वह समस्त संसारी विषयों का ज्ञान व्यर्थ ही है। यदि अकेले प्रभु को जान लिया तब और जानने की जरूरत ही क्या है। उसके जानने के अतिरिक्त शेष कुछ रहता ही नहीं है।

एक प्रभु प्रेमी सन्त कहते हैं -
जाना मैंने जननी जनक, भाई बंधु जाने।
परिवार नातेदार, समाज सब जाना है।
खेलना-खाना जाना, अपना-पराया जाना।
दूसरों को अपने को बनाना, खूब जाना है॥
एंठना अकड़ना रौब-दौब सब जाना,
पैसा कमाना हुकुम हिकमत सब जाना है,
सब कुछ जाना पर कुछ नहीं जाना।

यदि उसको न जाना जिसके समीप जाना है। जो प्रभु ज्ञान विज्ञान के स्वरूप हैं, अधिष्ठान हैं उनको जानने के बाद क्या जानना शेष रहता है।

''उर अन्तर यामी रघुराऊ''

यद्यपि महाराजश्री भी अपनी सर्वज्ञता को सदा छिपाए रहते थे, फिर भी कभी न कभी वह स्वतः ही प्रकट हो जाती।

सन् 1973-74 की बात है, श्री वैष्णव दास जी की वैराग्य भावना प्रबल हुई। विभिन्न संतों के संपर्क में गए। धौलपुर में ही एक सुप्रसिद्ध पुराने संत से उन्होंने अपनी भावना व्यक्त की। साधुता की दीक्षा लेने का संकल्प भली भांति सुनाया। सन्त ने कहा - भैया चाहे जहां से मंत्र दीक्षा ले लो,

किन्तु सच्चे गुरु तो करहवाले रामायणी बाबा श्री रामदास जी एकमात्र प्रभु रूप हैं। तुम उनकी शरण में चले जाओ। खुशी-खुशी स्थान पर आए, महाराज श्री का दर्शन किया किन्तु उनकी चर्या देखकर मन में संदेह आया। कल्पना की, केवल ऋषि नहीं, राजर्षि प्रतीत होते हैं। कुछ निश्चय नहीं कर पाए। ऊहा-पोह में वापस चले आए। धौलपुर उन्हीं संत से मिले, उनके पूछने पर मन की धारणा सुनाई। संत ने कहा - तुमसे भूल हो गई, फिर चले जाओ।

लौटकर फिर करह स्थान आए, महाराज श्री के चरणों में माथा रखा - दीनता से प्रणाम की। कुशल प्रश्नोत्तर के बाद पूछा - कैसे आए। वैष्णव जी ने अपने मन की बात मंत्र दीक्षा की प्रार्थना चरणों में रखी। तुरंत महाराज जी बोले - अरे भैया - हमारे राम तो ठाट-बाट वाले हैं। कोई दूसरे जटा-मठधारी सिद्ध की खोज करो। बस अपने मन में पहली आई शंका को महाराज श्री के मुख से सुनकर चरणों में गिरकर रो पड़े। कृपालु महाराज श्री ने दूसरा मन का संकल्प सुनाया। अभी घर का 15 दिन का इंतजाम करने का जो संकल्प था उसे पूरा कर आओ। यह दूसरा महाराजश्री के अन्तर्यामी होने का प्रमाण मिला। कृपा, आशीर्वाद लेकर घर आकर जो रह गया था, इन्तजाम करके श्री चरणों में चले गए। यथाशक्ति सेवा एवं साधना की।

आज वे ही श्री वैष्णवदास श्री वृंदावन एवं गोकुल के स्थान के अधिकारी हैं।

*****

दीनबंधु दास बेहट वालों को अन्नपूर्णा का आशीष

हरि सों तू जनि हेत करि हरिजन सों कर हेत।
मालमुलुक हरि देत हैं हरिजन हरि ही देत॥

*****

भक्त मिलो भगवान से निशिदिन प्रभु गुण गान।
तब वह वह रहता नहीं हो जाता भगवान।

ग्वालियर जिले का गांव है बेहट। संगीत सम्राट तानसेन की जन्मभूमि है। अमर साधकों की सृष्टि का एक पावन प्रकाश का पुंज। झिलमिल नदी के किनारे महाराज श्री का स्थान है। पहले वहां दयालु दास जी साधना करते रहे, कुछ समय पश्चात उनका शरीर पूरा होने पर यहां करह स्थान से दीनबंधु दास जी को वहां व्यवस्थापक अधिकारी रूप में भेज दिया। उन दिनों गेहूं का अभाव था। खेती का विकसित वैज्ञानिक रूप नाम मात्र को नहीं था। अधिकांश कन्ट्रोल से गेहूं मिलता था। वह आस्ट्रेलिया आदि देशों का था, जो यहां के निवासियों के अनुकूल भी नहीं पड़ता था। फिर भी प्रयोग तो करना ही पड़ता।

महाराज श्री का स्थान, भावुक भक्तों का आना-जाना तो था ही। व्यवस्था बन नहीं पा रही थी। दीनबंधु दास बड़े दुःखी हुए मन में आया चलो करह चलें, यहां आए, संयोग से महाराज श्री कहीं जाने को तैयार अलपी पहन रहे थे। आश्चर्य हुआ महाराज श्री की धुली हुई अलपी से एक गेहूं का दाना टपका। दीनबंधु दास पास ही खड़े थे, महाराज श्री बोले - खालो। उन्होंने निःसंकोच उस दाने को खा लिया। परिणाम यह हुआ कि तब से आज तक वहां अन्न का भंडार सदा परिपूर्ण ही रहता है।

*****

दुसायत वाले वृंदावन वाले आनंददास जी का भविष्य कथन

रोम-रोम जिनके रमा सर्व रमैया राम।

देखत में दो लगत हैं संत कहो चाहे राम॥

सन् 1981 के लगभग महाराज श्री वृंदावन पधारते थे, ग्वालियर वाले रामायणी बाबा के नाम से ख्याति थी। उड़िया आश्रम, आनंद वृंदावन, दुसायत मोहल्ले वृंदावन में श्रावण में नियमतः कथा चलती थी। श्रीधाम की अपूर्व श्रद्धाधारा महाराज श्री के चरण प्रक्षालन करती थी। अपनी शरीर यात्रा पूरी करने से पहले कहा – हम चित्रकूट जा रहे हैं, ऐसा कहकर जीवन लीला पूर्ण की।

इस घटना के कुछ ही दिन पूर्व खैरागढ़ महाराज श्री के दर्शनों को पधारे बड़ा स्वागत सम्मान हुआ। कुछ समय बाद महाराज श्री ने दीदी राजकुमारी से कहा – इनकी सेवा कर लो – आखरी सेवा है। यह उनकी प्रभुता, समग्र ऐश्वर्य का सूचक है –

कालकर्म गति अगति जीव की है हरि हाथ तुम्हारे।

*****

(नसरौल वाले) मस्तरामजी का आशीर्वाद (अंतिम)

उन जैसी मस्ती का स्वरूप आज कहां देखने को मिलता है। रामलीला टीवी में आने लगी। टीवी खरीद ली। लीला शुरू होने से पहले कोई प्रचार दिखलाया। गाली देकर लात मारी टीवी फूट गई। बड़े प्रसन्न हुए।

आश्रम के अंदर कोई लघु शंका नहीं कर सकता था। वे अपनी मौज में कहते थे – भैया हमारी दो बातें सुनो –

एक तो यह कि बड़े महाराजश्री हमारा शरीर और महाराजश्री में अंतर मत समझना।

महाराज श्री का कोई नित्य दर्शन करता रहेगा तो विद्वान पंडित बन जाएगा।

*****

जड़ भी महाराज श्री की आज्ञा मानते थे

जहँ असि दसा जड़न्ह की बरनी।
को कहि सके सचेतन करनी॥

जब तक बुद्धि में द्वैत है तभी तक संसार में जीव जगत, जड़ चेतन की अनुभूति होती है। द्वैत के मिट जाने पर संसार का समस्त जड़ चेतन आदि विवाद स्वतः ही समाप्त हो जाते हैं।

महाराजश्री की ऐसी झांकी कई बार देखने को मिली जब उनके संकल्प के अनुसार जड़ भी चेतन हुए।

भाई बसंत नागपाल सेठ (सिंधी) जो बहुत समय से यहां स्थान पर ही साधन भजन कर रहे हैं। उन्होंने सुनाया -

एक बार महाराज श्री उनके घर पधारे स्वागत हुआ, चित्र लिए गए। जब दो चार चित्र ले चुके तो महाराज श्री बोले - बस बहुत हैं, अब परेशान मत करो। अवसर ऐसा कि महेन्द्र का छोटा बालक महाराज श्री के चरणों में, महाराज श्री का कृपावरदह स्त बालक के सिर परप्रबल इच्छा हुई यह चित्र आना चाहिए। सब उपाय किए - कैमरे ने अपना काम बंद कर दिया। अंत में मनोहर ने देखा रील आधी है, कैमरा ठीक है। महाराजश्री से विनत होकर प्रार्थना की। महाराज जी यह एक चित्र और आ जाए। मुस्कराकर बोले - अच्छा, कैमरा चेतन हो गया। तुरंत चित्र ले लिया गया।

कभी-कभी ऐसी अनंत घटनाएं लीला द्वारा दिखलाते।

*****

अभी रावण जल रहा है

राम सिंधु धन सज्जन धीरा।
चन्दन तरु हरि संत समीरा॥

यदि सूर्य भगवान न हों तो धूप का अनुभव कैसे संभव है। चन्द्रमा ही न हो तो चांदनी का परिचय क्या होगा? प्रभु सागर हैं, किन्तु सागर सर्वत्र नहीं जा सकता, बादल ही उसके जल को लेकर सर्वत्र वर्षा करते हैं। जड़-चेतन सृष्टि मात्र को जीवन प्रदान करते हैं। दूसरी बात सागर का जल किसी प्रयोजन का नहीं होता। बदल ही वाष्पीकृत करके उसे मीठा बनाकर सबको प्रदान करते हैं, सीधा तात्पर्य यह है - संत भगवंत में अंतर नहीं। निराकार की प्रतिमा का अपने व्यवहार से जगत को देकर प्राणीमात्र का दुःख दूर किया करते हैं। उनकी श्वांसों में उनके प्रभु का ऐश्वर्य, वाणी में सच्चिदानंद की प्रतिष्ठा होती है। अतः संत जहां भी रहते हैं पूरा वातावरण प्रभुमय हो जाता है। सामान्य वार्ताओं में भी प्रभु का गूढ़ ज्ञान प्रवाहित होता रहता है।

एक दिन बसंत भाई से कहा सिद्ध करो - रावण अभी जल रहा है। हनुमान जी उसकी चिता में नित्य सवा मन लकड़ी डालते हैं। समझा महाराजश्री मनोरंजन कर रहे हैं, किन्तु आपने ही कृपा करके बतलाया - तुम रात्रि 12 बजे अनुमान करना, एक सांय-सांय की आवाज आती है। तात्पर्य यह है मोह, काम, क्रोध आदि षडविकार रावण आदि है, सन्त हनुमान बनकर यज्ञ के बहाने कहीं न कहीं सवामन साकल्प का हवन करते कराते रहते हैं। सिद्ध है रावण अभी जल रहा है। सन्त हनुमान उसमें नित्य समिधा दे रहे हैं।

*****

श्रीमद् भागवती वार्ता प्रेत पीड़ा विनाशिनी

श्री महाराज श्री की कृपा में कई जगह कई प्रेतों की मुक्ति हुई, यदि इस विषय पर सबको लिखा जाए तो एक छोटा-मोटा ग्रंथ बन जाएगा परंतु बात घर की है, यहीं की है -

खैर वाहे का सोना भगत उनकी धर्म पत्नी को कई बार सर्प ने काटा, बार-बार के इस कष्ट से सभी को विचित्र सा लगने लगा। एक दिन महाराज श्री के पास आए प्रार्थना की, आपने उस मैया से पूछा - इस मैया को कष्ट देकर आपका क्या भला हो रहा है? आप कौन हैं? हमें बताएं, तुम्हारी अद्योगति से पीछा छूट जाएगा।

मैया ने उत्तर दिया मैं इटावा में बनिए के घर में थी। एक पं. जी ने कुछ रुपए मेरे पास रख दिए। वो मर गए। बात आई गई हो गई। मुरैना के पास रिहाने के घर मेरा विवाह हो गया। जबसे खैरवाहे में आई हूं। यहां मुझे सर्प रूप से सता रहे हैं।

श्री महाराज श्री ने उसे प्रेत-पीड़ा विनाश कथा सुना दी। अद्योमति से मुक्ति दे दी। तब से मैया स्वस्थ है। एकमात्र बालक की माँ है। उस पर महाराज श्री की पूर्ण कृपा है।

*****

बाबा श्रीरामदासजी महाराज, करह (ग्वालियर)

(परम सिद्ध सन्त श्री हरि बाबा महाराज वृन्दावन के संस्मरण से)

प्रातः स्मरणीय बाबा का दर्शन सर्वप्रथम मैंने अखण्ड हरिनाम संकीर्तन यज्ञ झूसी में किया था। वहीं उनके प्रेमपूर्ण व्यवहार से मैं उनकी ओर आकर्षित भी हो गया। उन दिनों बाबा का ऐसा स्वभाव था कि कोई कुछ भी बात करता हो आप चुप बैठे रहते थे। कोई प्रश्न करता तो प्रेम से समझा देते थे। जब मैं श्री रामायणजी की कथा कहता तो आप बड़े प्रेम से सुनते थे। एक अन्य कथावाचक महोदय अनेक प्रकार के बाह्य दृष्टांतों द्वारा जनता का मनोरंजन किया करते थे। इस पर (कहना नहीं चाहिए, बिज्ञजन क्षमा करें।) बाबा ने श्रीमुख से कहा था, "प्रेमभाव की कथा तो रामदासजी की ही होती है।"

अखण्ड संकीर्तन के समाप्त हो जाने पर मुझे प्रयाग-परिक्रमा, श्री अयोध्या यात्रा और लखनऊ पर्यन्त श्री स्वामीजी के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसके पश्चात तो जहां कहीं उत्सव होता वे मुझे अवश्य बुलाते थे। श्री रामायण की कथा में उनका अपार अनुराग देखा। मुझ पर उनकी अपार कृपा थी। मेरी तथा मेरे साथ रहने वाले संतों की छोटी-छोटी आवश्यकताओं का भी वे बड़ा ध्यान रखते थे। यद्यपि इससे मुझे बड़ा संकोच होता था, परंतु प्रेमवश वे मानते नहीं थे। खन्ना में उनकी आंखें प्रेमाश्रुओं से भर आई थी, जब उन्होंने कहा था - "बाबा! मेरा तो स्वास्थ्य ठीक नहीं है, आप गाड़ी पर बैठते ही हैं। वर्ष में कम से कम तीन बार अवश्य आया करें।" श्रीस्वामीजी के ये वचन मुझे जीवन भर नहीं भूलेंगे।

ऐसा कई बार हुआ कि जब सत्संग में स्वामीजी अद्वैत वेदान्त का वर्णन करते होते और मैं पहुंच जाता तो वे प्रसङ्ग बदलकर शुद्ध भक्तियोग का वर्णन करने लगते। कारण यही था कि नाम रूप मिथ्या प्रतिपादक अद्वैत

वेदान्त के प्रतिपादन द्वारा वे भक्तों के हृदय में ठेस पहुंचाना नहीं चाहते थे। ऐसा करना उनके स्वभाव के विपरीत था।

(1)

एक बार स्वामीजी के पास एक वकील साहब आए। वे ईश्वर पर विश्वास नहीं रखते थे। उनसे उनकी इस प्रकार बातें हुई -

वकील साहब - प्रकृति ही सब कार्य करती है। जैसे एक बीज से अन्य बीज उत्पन्न हो जाते हैं वैसे ही पशु से पशु और स्त्री-पुरुष-संयोग से मनुष्यों की सृष्टि होती रहती है। मनुष्य पृथ्वी आदि तत्वों से असंख्य वस्तुएं तैयार कर लेता है।

स्वामी जी - परंतु पृथ्वी आदि तत्वों को किसने बनाया?

इस पर वकील साहब चुप हो गए। कुछ भी न बोले तब स्वामी जी ने पूछा - क्या काम करते हो?

वकील साहब - वकालत करता हूं।

स्वामीजी - तभी तो बुद्धि तर्कजाल में पड़ गई है।

वकील साहब - क्या आप ईश्वर की सत्ता को समझा सकते हैं?

स्वामीजी - एक वर्ष तक पच्चीस हजार नाम प्रतिदिन जपो, तब समझाऊंगा।

(2)

जब स्वामीजी स्थान करह के यज्ञ में पधारे थे तो बड़ी तत्परता से प्रत्येक कार्य की स्वयं देख भाल करते थे। अपने निज जनों को सम्पूर्ण सेवा कार्य के लिए आज्ञा दे रखी थी; यहां तक कह रखा था कि माला और भजन छोड़कर भी भगवत्सेवा भाव से सम्पूर्ण कार्य करो। कथा, कीर्तन, सत्संग एवं रासलीला आदि सभी कार्यक्रमों में बड़े प्रेम से सम्मिलित होते थे। उस समय उनका बड़ा ही अनुराग देखने में आया। उत्सव की समाप्ति के बाद जब विदाई का समय आया तो आपने कुछ भी भेंट स्वीकार नहीं की। बोले,

"यहां से लेना नहीं है।" अपने एक सेवक रामबाबू के द्वारा आपने रजाइयों की सेवा भी कराई। चुपके से आपने एक रसोइया को एक रजाई दे दी गई। जब आपको पता लगा तो उसे फटाकरा कि रजाई ली क्यों।

एक बार मैं रामघाट में श्री स्वामी जी के पास श्री रामायण जी की कथा कह रहा था। वहीं स्वामी विवेकानंदजी योगवशिष्ठ की कथा भी कहते थे। एक दिन कथा में यह प्रसङ्ग आया -

'मोह मगन मति नहिं विदेह की। महिमा सिय रघुवर सनेह की।'

उस समय श्रोताओं की आंखों में आंसू आ गए। अनेक संन्यासी सन्त भी बैठे थे। उनमें तीन-चार को प्रेमाश्रु आ गए। इस पर स्वामी विवेकानंद कहने लगे, इनका संन्यास बिगड़ गया। ज्ञानी पुरुष कभी रो नहीं सकता। तब स्वामीजी ने कहा - "प्रेम में ज्ञानी को आंसू क्यों नहीं आ सकते। राजा जनक को देखो, पूर्ण ज्ञानी होते हुए भगवत्प्रेम में कैसे रो रहे हैं? आजकल तो जनक-जैसा कोई भी ज्ञानी नहीं है। भगवत्प्रेम की महिमा ही यह है कि उससे ज्ञानी भी रो पड़ते हैं।"

(3)

एक बार श्री स्वामी जी ने मुझसे कहा था कि हम और आप एक साथ तीर्थयात्रा को चलेंगे। उसके कुछ समय पश्चात आप परम धाम पधार गए। तीर्थ यात्रा का प्रोग्राम पूरा न हो सका। स्वामी जी के परमधाम पधारने के दो वर्ष बाद मैं पण्ढरपुर गया। यह दक्षिण का महान तीर्थस्थान है, जहां श्री विट्ठल भगवान और रक्खूभाई (रुक्मिणीजी) विराजते हैं। एक दिन रात्रि में मुझे श्री स्वामी जी ने स्वप्न में दर्शन दिया, मैंने पूछा - "बाबा! आप यहां कहां?" स्वामी जी बोले - मैंने आपसे कहा था न कि हम और आप एक साथ तीर्थ यात्रा को चलेंगे इसीलिए आया हूं। ठीक उसी रात को मीरा और पुजारी को * भी आपने स्वप्न में दर्शन दिया और बतलाया कि हमने बाबा को वचन दिया था कि हम दोनों एक साथ तीर्थ यात्रा को चलेंगे, इसीलिए

आया हूं। प्रातःकाल नींद खुलने पर जब आपस में स्वप्नों की चर्चा चली तो हम सभी आश्चर्य करने लगे।

(4)

श्री स्वामी जी प्रायः कहा करते थे कि शिष्य के कल्याण के लिए उसमें गुरुनिष्ठा का होना नितान्त आवश्यक है। एक बार गुरुनिष्ठा पर एक कथा भी सुनाई थी, जो इस प्रकार है -

उड़ीसा प्रांत में एक कायस्थ सज्जन थे। उन्होंने माँ काली की उपासना के लिए एक ब्राह्मण से मंत्र की दीक्षा ली थी। ब्राह्मण देवता मदिरापान किया करते थे। दैववशात् मदिरा के नशे में उन्होंने मंत्र का अशुद्ध उच्चारण किया और शिष्य ने उसी को ग्रहण कर लिया। वे एक वर्ष पर्यन्त अशुद्ध मंत्र को ही जपते रहे। तब मां काली ने उन्हें साक्षात् दर्शन देकर कहा, "वत्स! तुम्हारा मंत्र अशुद्ध है, इसे शुद्ध करके जपा करो।"

शिष्य - माँ! मेरा मंत्र तो गुरुजी से मिला हुआ है, वह अशुद्ध कैसे हो सकता है?

काली - तेरे गुरु ने मदिरा के नशे में मंत्र का अशुद्ध उच्चारण किया था।

शिष्य - माँ! गुरु जी के दिए हुए जिस मंत्र का केवल एक वर्ष जप करने से आपने साक्षात् दर्शन दिया वह अशुद्ध कैसे हो सकता है? वह जैसा भी हो, मैं तो उसी का जप करूंगा।

काली - तेरी गुरनिष्ठा से मैं बहुत प्रसन्न हूं, वर मांग।

शिष्य - माँ! गुरुजी ने मुझे जो मंत्र दिया है उसी का जाप करने से आप दर्शन दिया करें।

काली - एवमस्तु।

आज भी उड़िया प्रांत में उस अशुद्ध मंत्र से जितनी जल्दी सिद्धि मिलती है उतनी जल्दी शुद्ध मंत्र के जपने से नहीं मिलती।

*****

स्वामी श्री विज्ञान भिक्षुजी परिव्राजक (विशारदजी)

सन्त अकारण ही कृपा करते हैं।

यह बात सन् 1942 के चैत्र मास की है। मैं पाठशाला के मैदान में घास पर बैठा था। सूर्यनारायण अस्त हो चुके थे। कुछ अध्यापक द्रुत गति से पग पथ पर जा रहे थे। उनमें से एक ने कहा "आप यहां बैठे क्या कर रहे हैं? चलिए, परमहंस श्री उड़िया जी महाराज गंगा तट से पधारे हैं, उनके दर्शन कर आवें।" पूज्य श्रीमहाराजजी का नाम तो पहले ही सुन चुका था, सुनते ही ज्यों का त्यों उठ कर चल दिया। एक वृद्ध अध्यापकजी के आदेशानुसार सत्संग चलाने के लिए कुछ प्रश्न भी सोच लिए।

इसी उधेड़-बुन में सहता निवासी भाई कन्हैयालालजी का बाग आ गया। पूज्य महाराजजी चौकी पर विराजमान थे। आसपास की ग्राम्य जनता भी पर्याप्त मात्रा में थी। बड़ी ओजस्वी भाषा में आपका प्रवचन हो रहा था. संभवतः किसी प्रश्न का उत्तर दिया जा रहा था। हम लोग भी पीछे बैठकर उपदेश सुनने लगे। भाषण का तारतम्य इस प्रकार से मिलता जा रहा था कि सभी प्रसंग गुम्फित होते हुए मेरे प्रश्नों के उत्तर थे। सारी शङ्काओं का समाधान सहज ही हो गया। जनता मंत्रमुग्ध सी होकर एकटक दर्शन करती हुई प्रवचन सुन रही थी। मैं भी चकित रह गया। वास्तव में मैंने जैसा सुना था उससे भी अधिक पाया और पाया अपनी समझ से भी परे, नहीं-नहीं बहुत परे।

प्रवचन समाप्त हुआ। लोग पुनः कानाफूसी करने लगे।

*****

ग्वालियर का उत्सव

(परमसिद्ध सन्त श्री उड़ियाबाबा वृंदावन वालों के संस्मरण ग्रंथ से)

ऊपर सन् 1944 के होली के उत्सव का उल्लेख किया जा चुका है। उसमें ग्वालियर वाले बाबा रामदासजी पधारे थे। आपका गुरुस्थान ग्वालियर से प्रायः दस मील दूर करह में है। यहां आपने एक उत्सव करने का निश्चय किया था। उसमें पधारने के लिए आपने पूज्य बाबा और महाराज जी से प्रार्थना की। बाबा रामदासजी का इन दोनों ही महापुरुषों के साथ बड़ा घनिष्ठ संबंध था, अतः दोनों ही ने वहां जाना स्वीकार कर लिया। पूज्य बाबा तो उत्सव समाप्त होने पर द्वितीया को ही कुछ विरक्त सेवकों को साथ लेकर पैदल चल दिए किन्तु श्री महाराज जी ने मुझे भेजकर बांध प्रांत से कुछ चुने हुए कीर्तनकार बुलाए और उन्हें साथ लेकर रेल द्वारा प्रस्थान किया। हम लोग चैत्र कृष्णा अमावस्या को करह पहुंचे। बाबा हमसे एक दिन पहले वहां पहुंच चुके थे।

वहां का दृश्य देखकर तो हम चकित रह गए। यह तो सचमुच ही जंगल में मंङ्गल हो रहा था। एक बहुत लंबा चौड़ा मैदान साफ किया गया था। उसमें एक विशाल मंडप बनाया गया था तथा उसके अतिरिक्त और भी दो तीन छोटे मंडप, हजारों डेरे, रावटियां, शामियाने और फूस की कुटियाएं तथा अनेकों टीन के विश्रांम स्थान बने हुए थे। इन सबसे अलग हमारे बाबा के लिए एक नवीन पक्की कुटी बनाई गई थी तथा उसके आस पास उनके भक्त परिवार के लिए सैकड़ों रावटियां और फूस की कुटियाएं थीं। महाराज जी के लिए सबसे अलग पहाड़ी के ऊपर नितान्त एकान्त में एक नवीन कुटी थी, उसके पास दो चार कुटियां और भी थीं।

मैदान में एक और बड़ी पाकशाला थी। उसके चारों ओर टीन का परकोटा बना हुआ था तथा टीन से ही उसे छाया गया था। उसमें एक ओर

बड़ा भारी भंडार और दूसरी ओर कोठार था। इतना विशाल कोठार और भंडार तो आज तक किसी भी उत्सव में नहीं देखा गया। कोठार में एक ओर आलू तथा अन्य शाकों के ढेर लगे हुए थे। एक ओर सैकड़ों पीपे शुद्ध घी, दूसरी ओर सैकड़ों बोरी खांड और तीसरी ओर आटे की हजारों बोरियां रखी हुई थीं। भंडार की लंबी लंबी टीन की बैरकों में बड़ी-बड़ी पैंतीस भट्टियां बनी हुई थीं। उनमें हर समय पूड़ी, मिठाई, मालपुआ एवं शाक आदि बनते रहते थे।

एक ओर बहुत बड़ा बाजार भी लगा हुआ था। उसमें सैकड़ों बढ़िया-बढ़िया दुकानें थीं। उन सब पर वस्तुओं के निश्चित भाव लिखे हुए थे। सभी बड़ी पवित्रता से पूड़ी और मिठाई आदि तैयार करते तथा उन्हें ईमानदारी से बेचते थे। इस उत्सव भूमि में चार-पांच हजार तो स्वयंसेवक, राजकीय सैनिक और पुलिस के आदमी थे, जो हर समय अपनी ड्यूटी के अनुसार पहरा देते थे तथा और भी सब प्रकार का प्रबंध करते थे। इसी से इतने बड़े मेले में किसी की कोई चीज नहीं खोई। यदि खो जाती तो एक दफ्तर में जमा होकर वह अपने मालिक को मिल जाती थी। औषधालय भी सारे मेले में आठ दस से कम न होंगे, उनमें बड़े प्रेम से चिकित्सा की जाती थी।

हमारे बाबा रामदासजी तो निरंतर समागत संत एवं अतिथियों के सत्कारों में व्यग्र रहते थे। वे तो इस समय खाना, पीना, सोना, बैठना सभी भूले हुए थे। हर समय कमर कसे इधर-उधर दौड़ते रहते थे, अतः उत्सव का सारा भार हमारे परम उदार सरकार ने अपने ऊपर ले लिया था। आपने हम लोगों से कहा कि यह बाबा रामदास का उत्सव नहीं हमारा अपना ही उत्सव है। इसको बांध और वृंदावन के उत्सव से भी अधिक सावधानी से संभालना चाहिए। देखो, किसी भी प्रकार की ढील न हो। सत्संग, कथा-कीर्तन, रासलीला और रामलीला का सारा प्रबंध हम लोगों को स्वयं ही

करना चाहिए। इस प्रकार जब आपने अपने ऊपर यह भार ले लिये तो फिर प्रबंध होना कौन बड़ी बात थी। सभी काम सुचारू रूप से होने लगे। प्रोग्रामों में सब लोग ठीक समय पर आ जाते थे। विशिष्ट व्यक्तियों को यथासमय लाने की ड्यूटी हम लोगों की थी। बस, निरंतर आनंद की वर्षा होने लगी और उससे आप्लावित होकर सभी लोग अपने को कृतकृत्य समझने लगे।

उत्सव के प्रत्येक प्रोग्राम में बाबा रामदासजी के गुरु महाराज अवश्य पधारते थे। उनके साथ हजारों भक्त 'जय सियाराम जय जय सियाराम' की तुमुल ध्वनि से आकाश को गुञ्जायमान करते आते थे। उनके आने पर वहां की सारी जनता खड़ी हो जाती थी तथा सब लोग शांत हो जाते थे। वे बड़ी नम्रता से पहले श्री महाराज जी और पूज्य बाबा को और फिर सभी प्रमुख संतों को अलग-अलग प्रणाम करते थे और फिर हाथ जोड़े खड़े होकर सब ओर घूमते हुए सभी लोगों का अभिवादन करके अपने निर्दिष्ट आसन पर विराज जाते थे। आप विशेष पढ़े लिखे नहीं थे, केवल सामान्य सी हिन्दी जानते थे तथापि रामनाम में आपकी बड़ी अपूर्व निष्ठा थी।

आप जैसे तपस्वी, त्यागी और श्री रघुनाथजी के अनन्य शरण भक्त थे, वैसे ही योग्य शिष्य आपको बाबा रामदासजी मिले थे। आप बड़े ही शांत, उदार, विनयी, नम्र, मितभाषा और निःस्पृह संत थे। श्री रामचरित मानस के तो आप उच्च कोटि के वक्ता थे। आपका प्रवचन बड़ा ही सरस, मधुर, भावगर्भित एवं पाण्डित्यपूर्ण होता था। इसी प्रकार चुने हुए दोहों के साथ आपका कीर्तन भी बड़ा ही अलौकिक होता था। जिस समय आप कथा या कीर्तन करते उस समय तो ऐसा अमृत वर्षण होता कि नास्तिक लोग भी मुग्ध हो जाते थे। उन दिनों उत्सव का सारा भार आप पर ही था।

हमारे भोलाशंकर पूज्य चरण श्री उड़िया बाबाजी ने बाहर के प्रमुख अतिथियों की सेवा का भार अपने जिम्मे ले लिया था। वे अपने अनेकों

भक्तों द्वारा निरंतर उनकी सेवा का ध्यान रखकर उन्हें सब प्रकार संतुष्ट रखते थे। वहां उस समय स्वामी-सेवक का भेद मिट गया था। सभी सेवक बने हुए थे और सभी स्वामी थे। हमारे श्री महाराज जी ने देखा कि जनता बहुत है, सबका एक मंडप में बैठना संभव नहीं है तब आपने दो मंडप और बनवाए। वहां शामियानों की कमी तो थी नहीं। बात ही बात में मंडप तैयार हो गए। उनमें से एक में रामलीला और गायन आदि का प्रोग्राम रखा गया तथा दूसरे में व्याख्यान आदि का। इस प्रकार तीनों मंडपों में जनता बंट गई और बड़े ही आनंद एवं शांति से उत्सव चलता रहा।

उत्सव का विस्तार प्राय: चार मील के घेरे में था। तथा एक लाख की भीड़ थी तो भी उस मेले में बहिर्मुखता नहीं थी। सारे ही मेले में जगह-जगह अपने-अपने डेरों पर सब लोग कथा, कीर्तन, भजन, ध्यान और स्तुति पाठ आदि में लगे रहते थे। कहीं किसी भी प्रकार की अश्लील चर्चा या चेष्टा देखने में नहीं आई न कोई पारस्परिक झगड़ा ही देखा गया। बाहर से आए हुए संत एवं भक्तों के डेरों पर भी जिज्ञासुगण जाकर उनका सत्संग तथा सब प्रकार की सेवा करते थे। उस समय तो सचमुच वहां रामराज्य की स्थापना हो गई थी।

'चारिहु चरन धरम जग माहीं। पूरि रहेउ सपनेहु अद्य नाहीं॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुतिरीती॥
जहँ-तहँ नर रघुपतिगुण गावहिं। बैठि परस्पर यहै सिखावहिं॥
भजहु प्रणत प्रतिपालक रामहिं। शोभा शील रूप गुणधामहिं॥
जलज विलोचन श्यामल गातहिं। पलक नयन इव सेवक त्रातहिं॥'

यह संत समाज रूप प्रयागराज ही यहां उपस्थित हो गया था। चारों ओर ज्ञान, भक्ति और कर्म का ही प्रतिपादन हो रहा था। इसी सत्संग रूप त्रिवेणी में सहस्रों नर-नारी अवगाहन करके भवताप से मुक्त हो रहे थे।

'ब्रह्मनिरूपण धर्मविधि, वरनहिं तत्वविभाग।

कहहिं भक्ति भगवन्त की, संयुत ज्ञान-विराग॥'

इस प्रकार वहां सर्वथा शांति सुव्यवस्था और सद्विचार का ही साम्राज्य था।

उत्सव की समाप्ति के एक दिन पहले बाबा रामदास जी ने अपने प्रवचन में अत्यंत गद्‌गद होकर सब संतों को धन्यवाद देते हुए कृतज्ञता प्रकट की और कहा, "आप लोगों ने बड़ा कष्ट सहन करके मुझे और इस प्रांत की जनता को कृतार्थ किया है।" ऐसा कहकर वे रो पड़े। उनका ऐसा भाव देखकर सब लोग आनंद से भर गए। वह वक्तव्य क्या था, साक्षात् अमृत की वर्षा ही थी, फिर आप हाथ जोड़कर अपने यहां की जनता से बोले, "भाई आप लोगों ने तन, मन, धन से उत्सव की सेवा की है। इसके लिए मैं अत्यंत आभारी हूं और आप लोगों को हृदय से आशीर्वाद देता हूं कि भगवान आपका कल्याण करे। श्री रघुनाथ जी आप लोगों को अपनी भक्ति प्रदान करें। आप लोगों ने दस दिन से बराबर अपने घर से भोजन खाया है, यहां का एक कण भी स्वीकार नहीं किया है किन्तु आज आप लोगों से मेरी हार्दिक विनय है कि कल समष्टि भंडारे में आप लोग स्वयं मांग-मांग कर प्रसाद ग्रहण करें, तभी मेरा चित्त प्रसन्न होगा। याद रखिए - 'यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः- जो यज्ञशिष्ट अन्न भोजन करते हैं वे सब पापों से मुक्त हो जाते हैं।"

बस, दूसरे दिन समष्टि भंडारे का दृश्य बड़ा ही अपूर्व रहा। पहले तो साधु और ब्राह्मणों की पंक्ति हुई, फिर दरिद्रनारायण का सत्कार हुआ और तदनन्तर ग्रामवासियों की एक वृहत् पंक्ति हुई। इसके सिवा आठ दस जगह प्रसाद वितरण का प्रबंध किया गया था। जो लोग बैठना नहीं चाहते थे वे प्रसाद ले लेते थे, इस प्रकार आज प्रायः एक लाख व्यक्तियों का भोजन हुआ परंतु भंडार भरपूर था, अक्षय था। बहुत से लोगों को तो बाबा रामदाज जी स्वयं प्रसाद बांट रहे थे। हमारे बाबा और मराराज जी ने भी पंक्तियों के

दर्शन किए।

यज्ञ के पीछे यज्ञकर्ता ब्राह्मणों का यथेष्ठ दक्षिणा और वस्त्रादि से सत्कार किया गया। संत-महात्माओं को भी वस्त्रादि भेंट किये गए। रासलीला और रामलीला की मंडलियों का भी धन एवं वस्त्रादि से अच्छा सत्कार हुआ। हमारे महाराज जी और बाबा से भी वस्त्रादि स्वीकार करने के लिए बहुत आग्रह किया गया किन्तु आप लोगों ने तो अस्वीकार कर दिया। चलते समय सब लोग बड़े प्रेम से मिले और यज्ञ का प्रसाद ले-लेकर यथास्थान चले गए। उस यज्ञ की स्मृति आज तक हृदय में बनी हुई है।

*****

उत्सव के पश्चात

उत्सव के पश्चात पूज्य बाबा तो कुछ भक्त और विरक्त संतों के साथ पैदल चले और महाराज जी ने हम लोगों के साथ रेल द्वारा प्रस्थान किया। वहां से हम आगरा आए और भानुप्रताप जी दरोगा के विशेष आग्रह से तीन दिन उनके यहां ठहरे। उन्होंने वहां की जनता से एक मंदिर में तीन दिन का अखण्ड कीर्तन कराया। तीन दिन तक वहां कथा, कीर्तन, सत्संग एवं रासलीला का अच्छा आनंद रहा। दरोगाजी ने बड़े प्रेम, उत्साह और श्रद्धा से सब लोगों की सेवा की।

वहां पूज्य बाबा के सेवक भगवद्दासजी ने अपने गांव सहता चलने के लिए प्रार्थना की। यह गांव आगरे से केवल दस मील दूर था अतः उनके प्रेम से बाध्य होकर सबके साथ सहता गए। वहां भी संभवतः तीन दिन ही उनके बगीचे में ठहरे। यह बगीचा बड़ा ही सघन, रमणीक और एकान्त है।

यहां खूब धूमधाम से उत्सव होता रहा। भगवद्दासजी ने बड़े उत्साह और तत्परता से सब प्रकार की सेवा की।

सहता से सब लोग वृंदावन आ गए। यहां बरेली के कुछ लोगों ने वहां चलने के लिए बहुत आग्रह किया अतः आप बरेली पधारे। वहां पन्द्रह दिन तक खूब आनंद रहा। पंडित चेतराम की मंडली ने ब्रह्मचारी प्रेमानंदजी के तत्वावधान में श्री मन्महाप्रभुजी की लीलाओं का अभिनय किया। पंडित राधेश्यामजी की कथा तथा अनेकों गायकों के सुंदर गान हुए। यहां अन्य स्थानों की अपेक्षा कीर्तन का विशेष आनंद रहता है, उसमें भी प्रभाती कीर्तन तो ऐसा कहीं नहीं होता।

*****

ऐसी आंख नहीं चाहिए

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं, आंखों का पूर्ण फल है भक्त भगवंत दर्शन। जो आंखें भक्त-भगवंत से दूर रहें उससे तो अंधा होना बहुत अच्छा है। बिल्व मंगल सूरदास अंधे कुए में कांटों में उलझकर गिर पड़े। जगत जननी वात्सल्य भाव भरित, करुणामूर्त राधा रानी के कहने पर श्याम सुंदर भी उसी कुए में उतर गए। सूरदास से यह सब तथ्य दूर नहीं हो सका, तुरंत समझ गए क्योंकि भगवान तो उसके हृदय में ही थे। आनंद विभोर होकर प्रिया-प्रियतम की मधुर झांकी का वर्णन करने लगे। राधा रानी ने प्रभु से पुनः प्रार्थना की, आप करुणा निधान हैं इतनी कृपणता क्यों? इसकी आंखें खोल देते तो बेचारा दर्शन कर लेता। जैसे ही प्रभु ने कृपा दृष्टि की बिल्वमंगल की आंखें ठीक उसी प्रकार खुल गईं जैसे प्रातःकालीन सूर्य भगवान का दर्शन करते ही, कमल की कली खिली उठे। पुनश्च श्री राधारानी वरदान

मांगने को कहा तो बड़ी दीनता से गिड़गिड़ाकर सूरदास ने वरदान मांगा। दाता, शिरोमणि आपसे यही मांगता हूं कि आपने मेरी जो आंखें खोल दी थी वे अब सदा-सदा के लिए फिर फूट जाएं। श्री जी के साथ श्याम सुंदर ने साश्चर्य पूछा-सूरदास? अंधा तो आंख ही चाहता है, उसके समान उसकी कोई दूसरी कामना नहीं होती। तुम इस सत्य से बिल्कुल विपरीत वरदान अंधापन मांगते हो? क्यों? अपनी सम्पूर्ण दीनता के साथ युगल जोड़ी के चरणों में गिरकर उसने प्रार्थना की प्रभु! आंखों का उद्देश्य तो पूरा हो गया, अब आंखें रखकर क्या करूंगा। आपका दर्शन करने के बाद जो आंख संसार की ओर देखे उसका तो फूट जाना बहुत अच्छा है -

''बावरी बे अखियां जरि जाइं।
जो सांवरो छाड़ि निहारत, औरे॥''

यदि ये आंखें फिर खुली रहीं, फिर संसार को देखें, मैं नहीं चाहता प्रभो! ऐसी आंखों से अंधापन बहुत अच्छा है।

श्री महाराज श्री का चरित्र भी आज हमारे आपके सबके बीच स्पष्ट है। गुरु भाई डॉ. माथुर एवं उनका समस्त डॉ. परिवार महाराज श्री के बहुत निकट रहा। उनकी सेवा से महाराज श्री बहुत प्रभावित रहे। संयोग से फ्रांस से नेत्र चिकित्सक विश्व के विशेषज्ञ अपने वैज्ञानिक उपकरणों के साथ नेत्र दान करने भारत वर्ष में आए। माथुर परिवार ने महाराज श्री को प्रार्थना करके दिल्ली बुलवा लिया। पहुंचने पर विशेषज्ञों ने परीक्षण किया और कहा, एक नेत्र प्रत्यारोपित हो जाएगा। प्रसन्नता के साथ पूरी तैयारी हुई। जो स्थान से साथ गए थे वे सब माथुर परिवार एवं दूरभाष से जहां जहां चर्चा की समस्त गुरु भाई बहनों में एक जीवन में नई प्रसन्नता का आनंद मिला।

रामराज्य की झांकी श्रीराम के वन गमन के रूप में प्रकट हुई ठीक वैसा ही हुआ। महाराज श्री ने रात्रि के 4 बजे ही परिवार को जगा दिया और कहा जल्दी चलो सभी लोग खेद-खिन्न किंकर्तव्य विमूढ़ हो गए। महाराज

श्री के चरणों में सभी ने बड़ी प्रार्थना की। प्रातः काल माथुर परिवार एवं अन्य विदेशी चिकित्सक क्या कहेंगे ? आपने उत्तर दिया भैया कुछ भी कहें, अब हमें आंख नहीं लगवानी, सभी के प्रश्नों का उत्तर सहज भाव से देने लगे।

"जनक जी ने श्री शुक देव जी महाराज से सत्संग करके कहा इसके बदले दक्षिणा में यदि मैं अपनी बेटी भी दे देता परंतु उन्हें मैं श्रीराम जी को दे चुका, अब इसके अनुरूप मुझ अकिंचन पर कोई ऐसी वस्तु नहीं जिसे मैं दक्षिणा में दे सकूं, तो भैया हम उन्हें क्या देंगे। हमें आंख नहीं लगवाना। दूसरे वाक्य में बोले इस आंख ने न जाने क्या-क्या देखा होगा। ऐसी दोषपूर्ण दृष्टि हमारे राम नहीं लेंगे। अंत में कहा सब कुछ ही तो जा रहा है। दांत गए, बाल गए, रोम-रोम नित्य जा ही रहा है, तब फिर एक आंख से पूरे जीवन की आशा ही क्या है।"

आज के संदर्भ में गुरुदेव का यह त्याग अपने आप में अद्वितीय प्रेरणा का सूर्य है, जो बिल्व मंगल सूरदास का प्रत्यक्ष परिचय है।

*****

नामनिष्ठा का अपूर्व चमत्कार

जय श्री राम

प्रकाश का अधिष्ठान सूर्य है। जल का सागर, अमृत का चन्द्रमा तथा गंध का आश्रय जिस प्रकार फूल है उसी प्रकार जग नियंता नारायण, परमेश्वर का अधिष्ठान भगवान का भी अधिवास भक्त होता है। पुराणों से लेकर अब तक के भक्ति जगत में भक्तों की अनंत गाथाएं भरी पड़ी हैं।

उनका पावन चरित्र अपने आप में पूर्णतया आदर्श है किन्तु प्रत्यक्ष रूप से देखने का अनुभव जो भगवान करे उसे तथा जिसे भगवान भी न कर सके भगवान का प्यारा भक्त उसको कर दिखाने में पूर्णतया समर्थ होता है। प्रत्यक्ष रूप से महाराज श्री का दिव्य जीवन हमारे आपके बीच प्रत्यक्ष प्रमाण है।

लगभग 50 वर्ष पूर्व महाराजश्री की सेवा में बाबा श्री बद्रीदास जी रहा करते थे। उन दिनों महाराज श्री दुखी एवं रोगी जीवों की भगवत स्वरूप मानकर उनकी सभी प्रकार की सेवा करते थे, जैसे भक्त अपने भगवान की करता है। स्वयं अपने हाथ से अनेकों औषधियां अनेकों रसायन सिद्ध करते रहते और सेवा करते रहते थे। बद्रीदास जी भी इसे देखा करते थे। भोले-भाले महात्मा उन्होंने सोचा कि महाराज श्री इस दवा से अनेकों रोगों का निवारण करते हैं। सिद्ध रसायन है जो शरीर में सभी रसों का अपूर्व भंडार भर देता है। इस लालच में आकर महाराजश्री के बटुए में से लगभग पाव भर अफीम का गोला निकालकर एक ही बार में खा गए। सोचा तो यह कि मेरा काया कल्प हो जाएगा, मैं अजर-अमर हो जाऊंगा परंतु हुआ उल्टा। उल्टी-दस्तों से शरीर में कुछ नहीं रह गया। काया बिल्कुल सफेद पड़ गई और शरीर पत्थर की मूर्ति की तरह जड़ रह गया। महाराज श्री को आगरा खबर लगी। इधर कागारोल में उनके अंतिम संस्कार की तैयारी होने लगी। सायंकाल के लगभग 4 बजे का समय रहा होगा तब तक आप पधार गए। सभी संत भक्तों को रोक दिया और बोले यह तो पूर्ण सेवा भावी संत थे।

भगवन नाम कीर्तन की ध्वनि की जाए बड़ा भावपूर्ण कीर्तन हुआ। उन दिनों में महाराज श्री का कीर्तन ऐसा प्रभावी और दर्शनीय होता था जिससे लगता था धरती और गगन मिल रहे हों। उनकी करताल घंटी और चरणों की गति से लगता था कि जल तत्व भी चेतन से मिलने के लिए वह भी इस नामामृत में डूबकर कीर्तन करने को तत्पर हो। सूर्य अस्त होने चला

समस्त ग्रामवासियों में निराशा, उद्वेग और अब क्या होगा, अब क्या होगा, ऐसी स्थिति में सभी ऊब-डूब रहे थे। इतने में ही डूबते सूर्य के आगम अंधकार में बद्रीदास एक साथ खड़े होकर महाराज श्री के चरणों में लिपट गए। इस दृश्य को देखकर यह सिद्ध होता है -

"भक्त बड़े भगवान से, कह श्रुति संत विचार।
एक संत के चरित पर, नारायण बलि हार॥"

(नाम महिमा के निबंध से पूर्व)

*****

श्री परमहंस जी का गोपाल घाट गोकुल स्थान

अंतिम निर्माण परदादा गुरु देव का

प्रभु के प्यारे भक्तों की सूझ-बूझ बिलक्षण ही होती है। आज तक अनगिनत गुरु भक्त हुए हैं और होंगे किन्तु प्रत्यक्ष रूप से आदेश होने पर गुरुदेव की आज्ञा पालन में कितना निर्वाह हुआ है, उनकी श्रद्धा का स्वरूप सदा समान रहा, इसका

प्रत्यक्ष प्रमाण दूसरा हो या न हो लेकिन महाराज श्री का स्वरूप आज के इतिहास में अद्वितीय आदर्श है। समग्र जीवन का पुरुषार्थ तो सेवा में व्यतीत

श्री 108 परमहंस जी महाराज जी का मंदिर (गोकुल)

किया ही परंतु स्वप्न में भी गुरुदेव की आज्ञा हुई तो महाराजश्री ने उसे पूर्ण करके ही विश्राम लिया। इन स्वप्न के आदेशों में केवल करह स्थान ही सीमित नहीं रहा वरन परदादा गुरु अर्थात श्री बड़े महाराज जी के गुरुदेव श्री तपसी जी महाराज और महाराज के गुरुदेव श्री भगवान दास जी परमहंस गोपालघाट गोकुल को पुनर्जीवित करने का आदेश हुआ। इस परमहंस आश्रम के निर्माण में श्री महाराज जी ने अपनी समस्त निष्ठा को पूर्णतया समर्पित कर दिया। यों तो पूरे जीवन ही महाराज जी निर्माण में लगे रहे जिसमें कैला मैया, श्यामा मैया का मंदिर यज्ञशाला, शिव मंदिर, श्री रामजानकी मंदिर, संत निवास, गौशाला, अतिथि निवास गुरुसेवा सदन, चिकित्सालय, भंडार गृह, एकादश मुख रुद्र हनुमान मंदिर, टेकरी, जरारा, नूराबाद, खैरागढ़, वृंदावन इन निर्माणों में अलौकिक सम्पदा जिसको तुलसी दास जी ने लिखा-

मुनि प्रभाव जब भरत बिलोका,
सब लघु लगे लोक पत लोका॥

क्योंकि सभी आश्रमों में जीवन की श्रेष्ठतम सुविधाएं, उत्तमोत्तम भोजन, उत्तमोत्तम वस्त्र, प्रकाश, स्वच्छता सबका अपूर्व भंडार समस्त रिद्धि सिद्धियों

के साथ उतार दिया जिसको देखकर केवल आश्चर्य ही हाथ रहता है। ऐसे अवसर भी सामने आए जब महाराजश्री से तत्कालीन राजा-महाराजा निरंतर निवेदन करते थे, कहते थे कोई सेवा करने का अवसर देकर हमारे ऊपर कृपा करें। कोई मंदिर, धर्मशाला, गौशाला आप जहां जो आज्ञा करें वैसा ही निर्माण करा दिया जाएगा।

बहुत बार जब वे ऐसा कहते रहे तो मुस्कुराते हुए धीरे-धीरे यही कहते रहे आप तो समर्थ हैं, भारतवर्ष के किसी भी तीर्थ में चाहे जैसा निर्माण करने में समर्थ हैं। यहां कोई आवश्यकता नहीं, यहां तो दीनबंधु स्वयं ही सब संभाल रहे हैं दीनों का दरबार है। कभी-कभी अवसर आने पर मुझ जैसे ढीठ ने पूछने का दुराग्रह किया कि महाराज जी आप उनसे इतनी मनुहार करने पर भी कोई सेवा क्यों नहीं लेते, तब आप बड़ी गंभीरता से कहते भैया राज का पैसा तो पाप का होता है। ऐसा निर्माण कभी शुभ अणु-परमाणु से युक्त मंगलमय वातावरण में ज्यादा सहायक नहीं होगा।

कहते थे जैसा होवे वित्त वैसा बने चित्त, जैसा पिए पानी वैसी बोले बानी, जैसा खावे अन्न वैसा बने मन, चाहे कैसी भी विकट परिस्थिति सामने क्यों नहीं रही हो पर हमेशा यही कहते रहे गुरु महाराज सब दया करेंगे। जब-जब जैसी आवश्यकता हुई तब-तब उसकी पूर्ति का विधान सहज ही बनता रहा और सबसे अंत में रमण रेती में गोपालघाट पर श्री परमहंस जी के आश्रम का निर्माण उनके निर्माण कार्यों का शिखर है जो एक आदर्श है।

*****

हम तो अपने घर चले

आसादयापि महोदधिं न वितृषौ जातौ जलैः बाडवः।
मंधं प्राप्य न चातकोऽपि निवसन् पिपासाकुल सर्वदा
चन्द्रः शंकर शेखरेपि निवसन् पक्षक्षयेक्षीयते
प्रायः सज्जन संगमेऽपिलभते देवानुरूपंफलम्॥

"अर्थात् समुद्र में निरन्तर निमग्न रहने वाला बाडवाग्नि अनन्त अगाध जल राशि को पाकर भी प्यास रहित न हुआ। जड़-चेतन की पिपासा को शांत करने वाले सृष्टि के सर-सरोवर, सरिता, गिरि काननों को संतृप्त सजल करने वाले बादलों को पाकर चातक भी सदा प्यासा ही रहा। ब्रह्माण्ड के अंध तमस को दूर करने वाले, सृष्टि को क्रियाशील बनाने में समर्थ सूर्य जैसे स्वामी को पाकर उनके सारथि अरुण को पाँव नहीं मिल सके। आशुतोष अवढ़र दानी, देवाधिदेव महादेव के शीश मुकुट पर स्थान पाने वाला चन्द्रमा क्षयरोग से मुक्त नहीं हो पाया। तात्पर्य कैसे भी संत सज्जन की कृपा से उनका संग प्राप्त हो जाय, फल तो प्रारब्ध से भाग्य के अनुरूप ही मिलता है।"

कभी-कभी काल की क्रूर-कुचल का चित्र सामने आता है तो शोक का दुर्लध्य शिखर अश्रुओं का अशेष समुद्र, प्रिय-वियोग के बज्राघात से चूर-चूर होते हुए हृदय से हिचकियों का भूचाल समग्र चेतना को अन्तःकरण को किंकर्तव्य विमूढ़ बना देता है। ऐसा कुअवसर पूर्व जन्म के कर्मानुसार देखने- भोगने को दैव विवश बना देता है। तब किसी समर्थ की बुद्धि, शक्तिशाली-की कोई शक्ति काम नहीं आती। विवशता के आघात से फटी-विकल आँखें कोई मार्ग नहीं सुझा पातीं।

रह जाती है घुटन, उदासी, व्याकुलता।

संभवतया अतिशय दुःख देखकर निष्ठुर से निष्ठुर भी कभी-कभी

द्रवित हो जाते हैं, दया का भाव उनमें भी संचरित हो जाता है, किन्तु इस करालकाल की निर्दयता तो वर्णनातीत है। जिन सीताराम ने धरती को स्वर्ग रूप में प्रतिष्ठित किया, जीव-माया के प्रति उनका अगाध-प्रेम कितना है ?

प्राण-प्राण के जीव के जिव सुख के सुखराम।

जिन्होंने और तो और, अपराधी के प्रति भी इतनी उदारता प्रकट की, जिसका लोक में कोई दूसरा उदाहरण नहीं है-

''तिय निन्दक मतिमंद प्रजारत निजनय नगर बसाई।''

तथा

सिय निन्दक अघ-ओघ नसाए। लोक विशोक बनाइ बसाए।

ऐसे अपराध शिरोमणियों को दूसरा विसोक धाम बनाकर प्रतिष्ठित किया, उन श्रीराम को भी इस काल देवता ने उठा लिया, क्यों? यह नहीं, जितने भी महापुरुष जिनका पुरुषार्थ, इस धरती पर शान्तिः सुखं, सदाचार की शास्वती प्रतिष्ठा के लिए ही था, उन आनंद निधान श्रीकृष्ण, महावीर, गौतम, लोमष, मार्कण्डेय, दधीचि, शिवि, हरिश्चन्द्र, प्रभृति विभूतियों को क्यों हमसे छीन लिया? इन समस्त प्रमाणों से यही सिद्ध होता है कि देववश चाहे कोई कितने ही श्रेष्ठ आनंद में पहुँच जावे, कुछ भी सत्ता या शक्ति प्राप्त कर ले, किन्तु काल की क्रूर गति एवं प्रारब्ध का अबाध चक्र सब कुछ छीन ले जाता है।

''चक्रारि पंत्रिरिव गच्छति भाग्य पंक्तिः।''

स्पष्ट प्रमाण है-

जिन भूपुन्ह जम जीति काल जम अपनी बाँह बसायौ।
तेऊ काल कलेऊ कीने तू गिनती कब आयो॥

जिन्होंने अपने पुरुषार्थ से काल पर विजय प्राप्त करने में कोई कोर-कसर नहीं रखी, मृत्यु के स्वामी यमराज को अपने वशवर्ती बन्दी बनाया, किन्तु उनका समस्त संचित बल-पराक्रम घुटने टेकने को विवश हुआ।

रावणादि, बाली बाणासुर, भस्मासुर जैसों को उसी का भक्ष्य बन जाना पड़ा। काल की यह गति अबाध गति विधाता की सृष्टि इसी भाँति आवागमन के क्रम से अवकाश रहित नहीं होने देती।

श्री महाराज श्री ने भी जीवन की एक-एक श्वाँस अपने हृदयाराध्य पतित-पावन श्री सीताराम जी को हृदयरथ कर वही सब कुछ किया, जो स्वयं श्री रामजी ने किया। यों तो लगभग अवसरविशेष पर देशभर में श्रीराम-कथा श्रीराम-नाम का ध्वज अहिन्दी भाषी सुदूर दक्षिण भारत वर्ष में भी फहराया, फिर भी जिसे हम भारत वर्ष का मध्य मानते हैं, मध्यप्रदेश, मालव भूभाग, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, कुछ भाग पंजाब, दिल्ली, बुंदेलखंड, विशेष रूप से आपके सम्पर्क में रहा। जहाँ आज भी उनकी कृपा से सदाचार, शांति एवं प्रेम की प्रतिष्ठा में कई मंडल विविध-उपायों से समाज सेवा कर रहे हैं, करते रहेंगे।

विक्रम सं. 2058 के उत्सव से श्री गुरुदेव के चवालीसवें सिय-मिलन से प्रायः सम्पर्क में जाने पर सुनाते रहते हैं-

दादू पीछें सब मरें पहले मरे न कोय।
जो पहले ही मर रहे पीछे मरे न कोय॥

दूसरा सुनाते हैं-

पलटू मैं रोवन लगा देख जगत की रीति।
जहँ देखो तहं कपट है कासों कीजे प्रीति॥

अपनी पूर्वज पीठ श्री परमहंस आश्रम गोकुल, उत्तरार्द्ध जीवन का अंतिम निर्माण रहा। जैसा कि सभी सुविज्ञ पाठक जानते हैं, जीवन भर आपका यही लक्ष्य और पुरुषार्थ रहा। करह से लेकर इससे पूर्व लगभग बारह स्थानों की प्रतिष्ठा आपने कराई। गोकुल की रचना देखकर लगता है, इस पर आपका दिव्य-भाव अन्तिम लक्ष्य की ध्वजा बनकर अदृष्ट रूप से हर आँख को उस भाव का यथार्थ दर्शन अनुभव कराता ही है, जिसने

महाराज श्री को साथ रखा वह आज भी सभी के साथ हैं।

भारत-माता के अंक में भक्ति की नृत्यस्थली ब्रज में कैसा स्वरूप होना चाहिए, किसी के अनुमान में भी नहीं था, उसे परमहंस आश्रम के नाम से, देश-विदेश की भक्ति भावना के इतिहास में आदर्श रूप में स्थापित कर गए।

''आँधी आई प्रेम की तिनका उड़ा अकास''
तिनका तिनके से मिला तिनका तिनके पास॥

वि.सं. 2060 चैत्रशुक्ल पंचमी, शुक्रवार तदनुसार ई. सन् 26 मार्च 2004 का दिन इस भक्ति ज्ञान वैराग्य के अक्षय पात्र को उठाने आ ही गया। महाराज श्री का स्वरूप दर्शन ज्यों का त्यों रहा। उसके एक दिन पूर्व श्री मधु-सूदन की कथा सुनाई। कथा प्रवचन तो जो श्वास, पिछले पाँच वर्ष से परेशान किए थी, इतनी विवशता में जब कंठ से ध्वनि भी नहीं निकल पाती, तो क्यों बोलें? ग्वालियर, मुरैना और आगरा, देहली से जो भी श्रद्धालु डॉक्टर या आयुर्वेदाधिकारी आते रहे, सभी मना करते रहे कि अब महाराज श्री बोलें बिल्कुल नहीं। पर आप बराबर यही कहते रहे बिना कथा बोले बिल्कुल नहीं मानेंगे? प्रेमियों के पूछने पर उत्तर देते-नहीं बोलें तो सामने आए हैं, वे कुछ बोलेंगे ही। उत्तर तो देना पड़ेगा। दूसरा उत्तर देते, जिन-प्रभु का पावन चरित्र जीवन भर गाया, अब उसे बंद कर दें तो क्या अर्थ। यदि अभी प्राण-आयु नहीं लौटी, तो प्राण-प्रभु को छोड़कर कहाँ जायेंगे। अतः कोई भी कितना ही कष्ट हो, कथा बोलेंगे। बार-बार भक्त या सभी सेवक संकेत करते, चरण-दबाने लगते, किन्तु इस सन्दर्भ में कभी भी किसी की भी कुछ भी नहीं मानी । नित्य यही कहते रहे-

यस्मिन्दि ने श्रवणं नास्ति विष्णो स्तेषां जन्म व्यर्थ माहु कथायाम्
नयत्र गोविन्द कथा महानदी नयत्र नारायण पाद संश्रयः

प्रभु की स्मृति के बिना जो जीवन जिया जाय, वह जीवन नहीं, मृत्यु

है। अपने परम प्यारे प्रभु श्री सीताराम जी की लीला, उनका धाम , उनका दर्शन, उनका नाम स्मृति से निकल जाना ही मृत्यु है। संसार की सर्वश्रेष्ठ सम्पदा का नाम प्रभु नाम की स्मृति, संसार की सबसे बड़ी विपत्ति का नाम भगवत् विस्मृति है।

विपदो नैवविपदःसम्पदो नैव सम्पदः।
विपन्नारायण विस्मृति सम्पन्नारायण स्मृतिः॥

विपत्ति, विपत्ति नहीं है, संपत्ति, सम्पत्ति नहीं है। भगवान की स्मृति ही सर्वश्रेष्ठ सम्पत्ति है। भगवान को भूल जाना ही सबसे बड़ी विपत्ति है, जिसके साक्ष्य में हनुमान जी कहते हैं-

कह हनुमंत विपत्ति प्रभु सोई।
जब-तब सुमिरत भजन न होई॥

चाहे जैसी परिस्थिति रही हो, अत्यन्त विवशता-प्रतिकूलता में भी श्वास नलिका में मशीन की सहायता ली, किन्तु भगवतकथा भगवन्नाम उस स्थिति में भी आपने बंद नहीं किया।

अब तो साकेताधीश से मिली हुई आत्मा अब इस भौतिक आवरण को छोड़कर उन्हीं में मिलने के लिए आग्रह कर बैठी-

वासांसि जीर्णानि यथाविहाय नवानिग्रहणाति नरोपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानिदेही॥

"परमार्थ-साधक सपूतों के कोष में मृत्यु शब्द ही नहीं है। वस्त्र के जीर्ण होने पर जैसे नूतन वस्त्र पहन लिया जाता है, उसी प्रकार जीव समय आने पर पुरातन काया-कलेवर के जीर्ण रूप को त्यागकर दूसरा नया शरीर धारण कर लेता है।"

अर्थात् कोई वात्सल्यमयी माँ जब अपने प्यारे पुत्र के पहने हुए वस्त्र को गँवा मानकर बालक के रोने पर उतार कर फैंक देती है और दूसरा नया प्रियवस्त्र उसे पहना देती है, तो मृत्यु तो माँ है। वात्सल्य की देवी है।

देखती है कि अब उसका यह वस्त्र अनुरूप नहीं रहा, तो दूसरा नूतन वस्त्र पहना देती है, सन्त-भक्तों का भाव ही निराला है। जिसे संसार मृत्यु मानता है, वह तो उनके लिए आनंद है, ब्रह्मानंद है, परमानंद है, वे कहते हैं-

जा मरिवे सों जग डरे सो मरे आनंद।
कब मरिहों कब भैंटिहों पूरन परमानंद॥

महाराज श्री के कमरे में चार चित्र विग्रह लगे हुए हैं- ऊपर गुरुदेव का, दक्षिण ओर दशरथ नंदन, आँगन में कागराज को पुआ खिलाते हुए सामने हनुमानजी, बांयी ओर गणेश। जब आश्रम में रहने वाले सभी सेवक अपनी-अपनी चर्या में चले गए, उस समय नितान्त एकांत संसार में सुदूर लोकदर्शन से अछूती आंखों ने गुरुदेव की ओर दृष्टि की, जो वरद मुद्रा में प्रार्थना की-

जो दिया आपने उससे ही संकल्प आपका पूर्ण किया,
जो इच्छा थी प्रभु पूर्ण करी अब बिना आप नहिं जात जिया,
जगमोहन रामदास गुरुवर इन चरन धूल से पृथक कहाँ
जो आज्ञा थी सो पूर्ण कर अब आप को छोड़ फिर जाना कहाँ?

अनन्तर ईशान दिशा की ओर दृष्टि की अवधराज के आँगन में माँ कौशल्या ने जो प्रातः राश बनाया उसे श्रीरामजी कागराज को खिला रहे हैं। बड़ी देर तक निहारते रहे। कितना उन करुणा निधान ने दिया और कितना आपने लिया। यह तो आप ही जानें। हम संसारियों से सदा अज्ञात है। फिर देखा सम्मुख मारुतिनंदन की ओर, जिन्होंने श्रीराम को अपने वश में कर रखा है।

गोस्वामी जी ने लिखा-

प्रणवउँ पवन कुमार खल बन पावक ज्ञान घन।
जासु हृदय आगार बसहि राम सर चाप धर॥

उन हनुमान जी को अपनी निष्ठा से अपने वश में किया। उनसे क्या

कहा ? वे ही जानें। फिर विघ्न विनाशक गणेश जी का दर्शन किया। यहां आने वालों पर वे कृपा करें। दोनों उंगली उठी रह गईं। एक में कहा यहां आने वाले भक्त पर कोई विघ्न न आवे। दूसरा यह कि सबका सब प्रकार से मंगल हो। इसी अंतिम निवेदन के साथ इसी झांकी के दर्शन में उनकी करुणा बरसाती हुई आंखें इष्ट दर्शन के लिए सदा के लिए खुली रह गईं। कमरे में केवल यही ध्वनि गूंज रही थी, सन्नाटा ही सन्नाटा, उसी आसन पर उसी समय, उसी मुद्रा में प्रभु लीन हो गए। सहसा सेवक भक्त सेवा में आए। देखते ही उनके साथ धरा चीत्कार कर उठी। सुप्त करुणा लुप्त हो गई। शोक-सागर में ज्वार उठने लगे। बिना भूचाल आए धरती फटने लगी। बिना आंधी आए, दिशाएं मलिन हो गई। प्रातःकाल की बेला का चित्र भयंकर अंधकार उगलने लगा। धीरज का भी कलेजा फट गया। बुद्धि स्थान छोड़कर चली गई। चेतना को भी मूर्च्छा आ गई। शब्द किसी के कण्ठ में रहा नहीं। सब अपनी-अपनी छाती कूटकर, सिर धुनकर पछता रहे हैं रो रहे हैं। आगन्तुक दर्शकों का जमावड़ा शोक सागर में डूब गया। आनन-फानन में जहां-तहां दूरभाष से संदेश गए। इस असह्य व्यथा का संदेश वायु से मन से भी अधिक द्रुतगामी बना कि सायंकाल होते-होते मुंबई, दक्षिण भारत, भोपाल, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, दिल्ली एवं प्रदेशवासी सभी अपनी-अपनी विरह व्यथा के तूफान को लेकर इस अश्रुसागर में डूबने उतराने लगे। ऐसा विषाद कभी देखने-सुनने को न मिला।

लगभग दिनभर के ताप-संताप में कुछ धैर्य धन, संतजन, वैदुष्य के विराट तपोधन मूर्ति आए। निर्णय हुआ, अंतिम संस्कार गुरुदेव की गोद में श्री विजयराघव सरकार के सम्मुख सरयू के तट पर श्री मार्कण्डेय एवं सिद्धों की मेखला के मध्य तुलसी, चंदन की शैया पर हो। पवन ऐसा लग रहा था मानो स्थान छोड़कर कहीं दूसरे लोक में चला गया। चारों ओर हाय-हाय। हे गुरुदेव हे महाराजजी आकाश का अनन्त भी इस लीला शरीर

को देखकर हैरान था। थोड़ी देर में शुद्ध घी का अभिषेक सुगंधित हाथों से संपर्क में हर्षित होकर अग्नि देव प्रसन्न अग्नि की गगन चुम्बी पलटों ने उस पावनतम काया को अपने में सदा के लिए समाहित कर लिया। चेतना विलखने को विवश थी। यही रुदन, सिसकी-हिचकी सभी को रात्रि के अंधकार में ले डूबी।

जो कल यहां था, अभी पल में था वह कल भी नहीं, पल में नहीं।
अब खोजें कहां यह ज्ञान नहीं बतलाने वाला कहीं नहीं॥
भूली-भटकी अंतिम विनती जग की ममता न लुभा सके।
राधारमण। मूरख जग में। गुरुदेव कृपा को निभा सके॥

पूरा वातावरण इसी करुणा को लेकर रात्रि के अंधकार में डूब गया। दिशाएं -

आए थे हम तैर को शेरे गुलशन कर चले।
देखमाली बाग अपना हम तो अपने घर चले।

धीरज देने वाला ही नहीं, धीरज स्वयं चला गया। विवेक नहीं, विवेक का स्थान ही तिरोहित हो गया। शेष तो रुदन है, प्रलाप है। व्याकुलता है, असमंजस है। किसी तरह वह घोर यामिनी-बीती। सूर्यनारायण षष्ठी पर आए। द्वितीय दिवस का संस्कार हुआ। सम्पूर्ण सेवक एवं सम्पूर्ण क्षेत्र स्थान पर ही विलख रहे हैं। विचार हुआ, गुरुदेव की भस्मी देश के समस्त तीर्थों में प्रवाहित की जाए। ऐसा अभूतपूर्व उत्साह उत्सव, पावन गंगोत्री के रूप में स्थान पर उतरा कि चुटकी-चुटकी भर से ही शेष मात्र वह स्थान रह गया। भावनानुसार जिसे जहां का सुयोग प्रतीत हुआ, गंगा-यमुना नर्मदा, शिप्रादि के पावन तटों पर सम्पूर्ण देश के तीर्थों अनन्तर संत, विद्वज्जन, आचार्यों द्वारा शास्त्र विहित समस्त धर्मों का विधि-पूर्वक-यथा समय उचित निर्वाह संपन्न कराया गया।

भण्डारा इस स्थान का एक अद्वितीय इतिहास है। स्वयं श्री महाराज श्री

ने यहां भंडारे के पात्र भी ऐसे अद्वितीय निर्माण कराकर रख रखे हैं, वैसे देश में दूसरे नहीं हैं। महाराज श्री के भंडारे की क्षेत्रीय जनों ने अपनी सभा की। उसमें भावाविव्हल होकर निर्णय लिया। यद्यपि अभी उत्सव हुआ ही है, फसल भी सियावर बोल गई। कम हुई, फिर भी इस समय हमारा बाप चला गया है। अब फिर नहीं जाएगा, उनकी कृपा जो करेगी, वही हमारा सबसे श्रेष्ठतम कल्याण होगा। यह उत्सव तो अद्वितीय होना चाहिए। सभी की सम्मति एक स्वर में समाहित थी। बड़े उत्साह और दिव्य भावना से महाराजश्री का अंतिम भंडारा आयोजित हुआ। जिसका आदर्श रूप समस्त सम्प्रदाय, मत एवं सामान्य जन के लिए प्रेरक है और रहेगा। हृदय का भाव -भार संभार अवश्य असह्य है -

जिनके सुखमय मृदुल वचन को श्रवण तरसते।
जिनके दर्शन काज नयन नित अश्रु बरसते।
जिनके पद को गहन हाथ दिन रात भटकते।
मिलत नहीं हैं यहीं लगत जन सीस पटकते।
मरे नहीं वे अमर हैं सत्ताचित आनंदतुन्द हैं।
हमें अभागा जानकर दर्शन देना बंद है।

साकेत से शाश्वत प्रकाश

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धा कवीश्वरः।
नास्ति येषां यशः कायै जरा मरणजं भयं॥

"वे रससिद्ध, कवि हृदय, पुण्यशील, महात्मा धन्य हैं, जिनकी कीर्ति-काया को विधाता की सृष्टि में न तो कभी कोई रोग ही छू सकेगा न बुढ़ापा ही आएगा न उनकी कभी मृत्यु होगी।" यद्यपि समस्त शास्त्र तो यही कहते हैं और प्रभु वाक्य भी यही है -

जन्मना जायते मृत्यु।

जन्म लेने वाले की मृत्यु ध्रुव है। परन्तु प्रभु के प्यारे संत इसके अपवाद हैं। मृत्यु तो स्वयं उनके प्रभु मिलन की महायात्रा में अपने सिर का पीढ़ा बनाकर उनके चरणों में सदा के लिए झुकी रह जाती है।

मृत्योमूर्ध्निं पदं दत्वा आरूरोह अद्भुतं गृहम्।

अर्थात् मृत्यु की खोपड़ी पर सिर रखकर सुनीति-नन्दन ध्रुव ने प्रभु की कृपा द्वारा प्रदत्त अद्भुत कृपा-विग्रह में आरोहण किया।

आज हमारे सामने श्री गुरुदेव का प्रत्यक्ष दर्शन नहीं है। यह निसन्देह दुर्भाग्य की सीमा है। ऐसा दुर्भाग्य कि जिसका भोग के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं। नीतिकार कहते हैं -

पत्रं नैव यदा करील विटपे दोषो बसन्तस्यकिम्।
वर्षा नैव पतन्ति चातक मुखे मेघस्य किं दूषणम्॥
नोडलूको व्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्।
यत्पूर्वं विधिना ललाट लिखितं तन्मार्जितं क्वक्षमः॥

बसन्त ऋतु के आने पर समस्त वनस्पति नए-नए पत्ते, पुष्प, फल सम्पदा से संपन्न होकर प्रकृति का शृंगार करती है, किन्तु अकेले करील वृक्ष में पत्ते न आवें तो इसमें बसंत का क्या दोष है? वर्षा के आने पर जितने भी जड़-चेतन जीव हैं, सभी की पिपासा शांत हो जाती है। सूखी धरती का समूचा कलेवर जल पूरित हो जाता है, किन्तु अकेले चातक की प्यास नहीं बुझे, उसकी शांति न हो तो इसमें मेघ कहां दोषी है? सूर्य नारायण के उदित होते ही समस्त संसार का अंधकार नष्ट हो जाता है। सारा संसार क्रियाशील हो उठता है, परंतु अकेले उल्लू को कुछ न दिखलाई दे तो इसमें सूर्य का कहां दोष है? तात्पर्य यह है कि विधाता ने हमारे प्रारब्ध में जो भी भोग-विधान लिख रखा है, जैसी ललाट-लिपि बन चुकी है, उसे मिटाने में कौन समर्थ है?

संभवतया भौतिक सत्यापन या तर्कशास्त्र में मीमांसक जो कुछ भी सत्य सिद्ध करते रहें, किन्तु अपवाद तो प्रायः सबका है, सर्वत्र है।

हम सब नित्य जीवन में देखते हैं, अनुभव करते हैं, सूर्य एवं चन्द्र दोनों देवता हैं, एक सृष्टि के कर्ता हैं, दूसरे संजीवनदाता, अमृत देने वाले हैं। किन्तु उनके साथ, उनके शत्रु निरंतर पीछा कर रहे हैं। ग्रहण कलंक भय सदा उनके सिर पर है। उदय-अस्त का क्रम भी शाश्वत है, जिससे भी अभी भी वे स्थिर नहीं हैं। विनय पत्रिका में गोस्वामी जी कहते हैं -

बिछुरे ससि रवि मन नयनतें पावत दुःख बहुतेरो।
भ्रमत-स्त्रमत निसिदिवस गगन महँ रिपुराहु बड़ेरो॥

प्रत्यक्ष इन दोनों देवताओं के साथ यह विपाक (कर्मफल) जुड़ा हुआ है - जिसे वे आज तक नहीं मिटा पाए, किन्तु भगवान के प्यारे-दुलारे भक्तों को देखें तो उनका प्रभु-प्रेम से भक्ति बना हुआ परम-पूज्य विग्रह ऐसा विलक्षण शरीर, जिसे न कोई रोग छू सके, न बुढ़ापा, न उदय, न अस्त, न कभी कोई कलंक। उनका तो उनके प्रभु कृपा द्वारा पोषित यश शरीर सदा-सर्वदा अजर, अमर रूप से दुःखीजनों का दुःख दूर करने एवं शाश्वती शांति, सुख में प्रतिष्ठित करने का अद्वितीय अवलम्ब बिना किसी व्यवधान के देता ही रहेगा। आनन्द सिंधु, सुखशास्त्री, शिवधाम, श्री सालिगराम से जोड़ता ही रहेगा। गोस्वामी जी कहते हैं -

नवबिधु विमल तानुजसतोरा। रघुवर किंकर कुमुद चकोरा॥
उदित सदा अँथइतिं कबहूंना। घटिहिन जग नभ दिन-दिन दूना॥
कोकतिलोक प्रीति अति करिही। प्रभु-प्रताप रवि छविहिन हरही॥
निसिदिन सुखद सदा सब काहू। ग्रासिहिन कैकई करतब राहू॥
पूरनराम सुप्रेम पियूषा। गुरु अवमान दोष नहिं दूषां॥

प्रभु श्रीराम के अगाध स्नेह सिन्धु भरत हैं।

उनके इस यश चन्द्र को न उदय-अस्त का व्यवधान है, न कभी

घटने-बढ़ने के, न किसी निन्दक का कलंक-केतु ही इसका स्पर्श कर पाएगा। सर्वथा सर्वतः ग्रहण की छाया से दूर श्रीराम से सदा परिपूर्ण, उन्हीं श्रीराम को अपना चकोर बनाकर प्रलयपर्यन्त भी भक्ति गगन में अमृत बरसाता ही रहेगा।

रही बात गुरुदेव के प्रत्यक्ष दर्शन की तो यह अभाव भी दुर्भाग्य की चिंता रेखा उन भक्तों को कभी नहीं छू सकेगी, जिन्हें विश्वास है कि जो उन्होंने कृपा करके दिया है, उसका प्रभाव ही ज्योतिष-कुण्डली एवं भाग्य-विधान से हमारे कष्ट-क्लेश की रेखाओं को मिटाने के ही लिए है। अनेक बार कृपा करके वे प्रवचनों में कहते रहे कि मानस-पाठ, इष्टमंत्र, शरणागति एवं नामजप जन्मकुण्डली के बारह भावों का फल बदलने में पूर्ण समर्थ है।

इसका भी सटीक प्रमाण रामचरित-मानस में गोस्वामी जी ने दिया। भगवती उमा की हस्तरेखा देखकर कहा कि -

जोगी, जटिल, अकाम मन गगन अमंगल भेख।
उस स्वामी एहि कहँ मिलहिं परीहस्त अस रेख॥

सुनकर माता-पिता को अतिशय पीड़ा हुई - तब ऋषि ने और भी कहा -

कह मुनीस हिमवन्त सुनु जो विधि लिखा लिलार।
देव दनुज नर नाग मुनि कोउ न मैटन हार॥

नारद जी बोले जा रहे थे किन्तु बीच-बीच में पर्वत पुत्री मन्द-मन्द मुस्करा रही थीं। ज्योतिषी भविष्यवाणी करे और जिज्ञासु बीच में हँस पड़े, तो ज्योतिषी के हाथ-पैर फूल जाते हैं। पहले तो नारद हड़बड़ाए फिर संभल कर बोले - राजन गिरिराज, जो मैंने कहा - उसका एक परिहार है। हिमांचल बोले - क्या है प्रभो/ नारद सोल्लास बोले -

जो तपु करे कुमारि तुम्हारी।

भाविउ मैटि सकें त्रिपुरारी॥

तात्पर्य यह है कि गुरुप्रदत्त आशीष होनहार को भी मिटाने वाला है। फिर कोई चिन्ता नहीं। भरोसा दृढ़ होना चाहिए।

गुरु हैं बड़े गुविन्द से मन कर देखु विचार।
हरि सिरजेते वार हैं गुरु सिर जेते पार॥

फिर गुरुदेव समर्थों के भी समर्थ हैं। उनका स्वयं का ही दुंदुभि घोष है -

हम वासी वा देश के जिसे कहत साकेत।
जिसे कहत साकेत श्रुती जाके गुन गावें।
शंभु-शारदा शेष महत्वकहि अन्त न पावें।
सत्य-धाम बैकुण्ठ बहिस्त से परैं बिराजें।
रामधाम सत चित्त नित्य धामन सिर ताजें या साजें॥
हंसन की कहा चले परम हंसहु ललचावें।
बिना कृपा श्रीराम स्वप्न में दरसन पावें।
त्रिगुन त्रिदेव त्रिवेदकाल की गति जहँ नाहीं।
दिव्य किशोर स्वरूप भक्त सुख सिन्धु समाहीं।
नाम रूप गुण भेद जहाँ कतहूँ नहिं दरसै।
होइ अभेद पुनिभेद भाव से सुख में सरसे।
रामदास पहुंचे वहीं काहू सों नहिं हेत।
हम वासी वा देश के जिसे कहत साकेत॥

*****

करह आश्रम की गुरु-परम्परा

सीतानाथ समारंभा रामानंदाय मध्यमाम्।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां बन्दे गुरु परम्पराम्॥

* सर्वेश्वर भगवान श्रीराम जी
* जगज्जननी श्री जानकी जी
* नित्य पार्षद श्री हनुमान जी
* श्री ब्रह्मा जी
* श्री वशिष्ठ जी
* श्री पाराशर जी
* श्री वेद व्यास जी ब्रह्म सूत्रकार
* श्री शुकदेव जी
* श्री पुरुषोत्तमचार्य जी बोधामान वृत्तिकार
* श्री जगद् गुरु गंगाधराचार्य जी
* श्री सदानन्दाचार्य जी
* श्री रामेश्वरानन्दाचार्य जी
* श्री द्वारानन्दाचार्य जी
* श्री देवानन्दाचार्य जी
* श्री श्यामानन्दाचार्य जी
* श्री श्रुतानन्दाचार्य जी
* श्री चिदानन्दाचार्य जी
* श्री पूर्णानन्दाचार्य जी
* श्री श्रियानन्दाचार्य जी

* श्री हर्यानन्दाचार्य जी
* श्री रामवरनन्दाचार्य जी श्रीमठ काशी
* श्री यतिराज रामानन्दाचार्य जी आनन्द भाष्यकार
* श्री अनन्तानन्दाचार्य जी
* श्री कृष्णानन्दजी पयहारी गलतागद्दी, जयपुर
* श्री अग्रदास जी रैवासा गद्दी, मारवाड़
* श्री नारायणदास जी (श्री नानाजी महाराज)
* श्री श्यामदास जी
* श्री प्रेमदास जी
* श्री प्रहलाद दास जी
* श्री रघुनाथदास जी
* श्री भगवानदास जी
* श्री मस्तराम दास जी बहादुरगंज, उज्जैन मस्तराम अखाड़ा
* श्री आशाराम दास जी गुल्लर छत्तासिंह पौर जगदीश पुरी
* श्री प्रेमदास जी गुल्लर छत्ता जगदीश पुरी
* श्री भगवानदास जी परमहंस गोपालघाट, गोकुल
* श्री सीताराम दास जी (श्री तपसी जी महाराज स्थान नूराबाद हनुमान मद्र)
* श्री रामरतन दास जी महाराज स्थान करह
* श्री रामदास जी महाराज स्थान करह
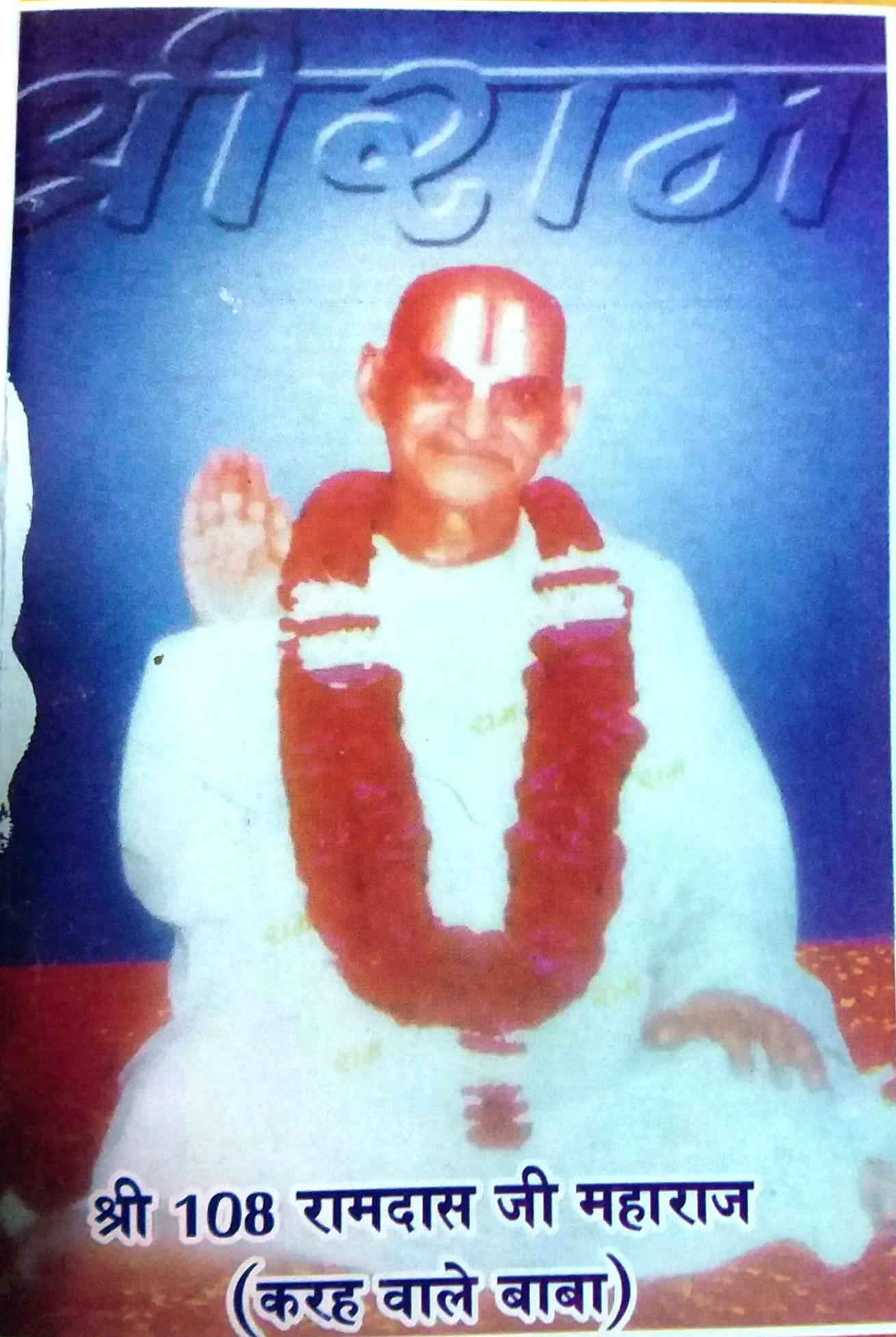
श्री 108 रामदास जी महाराज
(करह वाले बाबा)
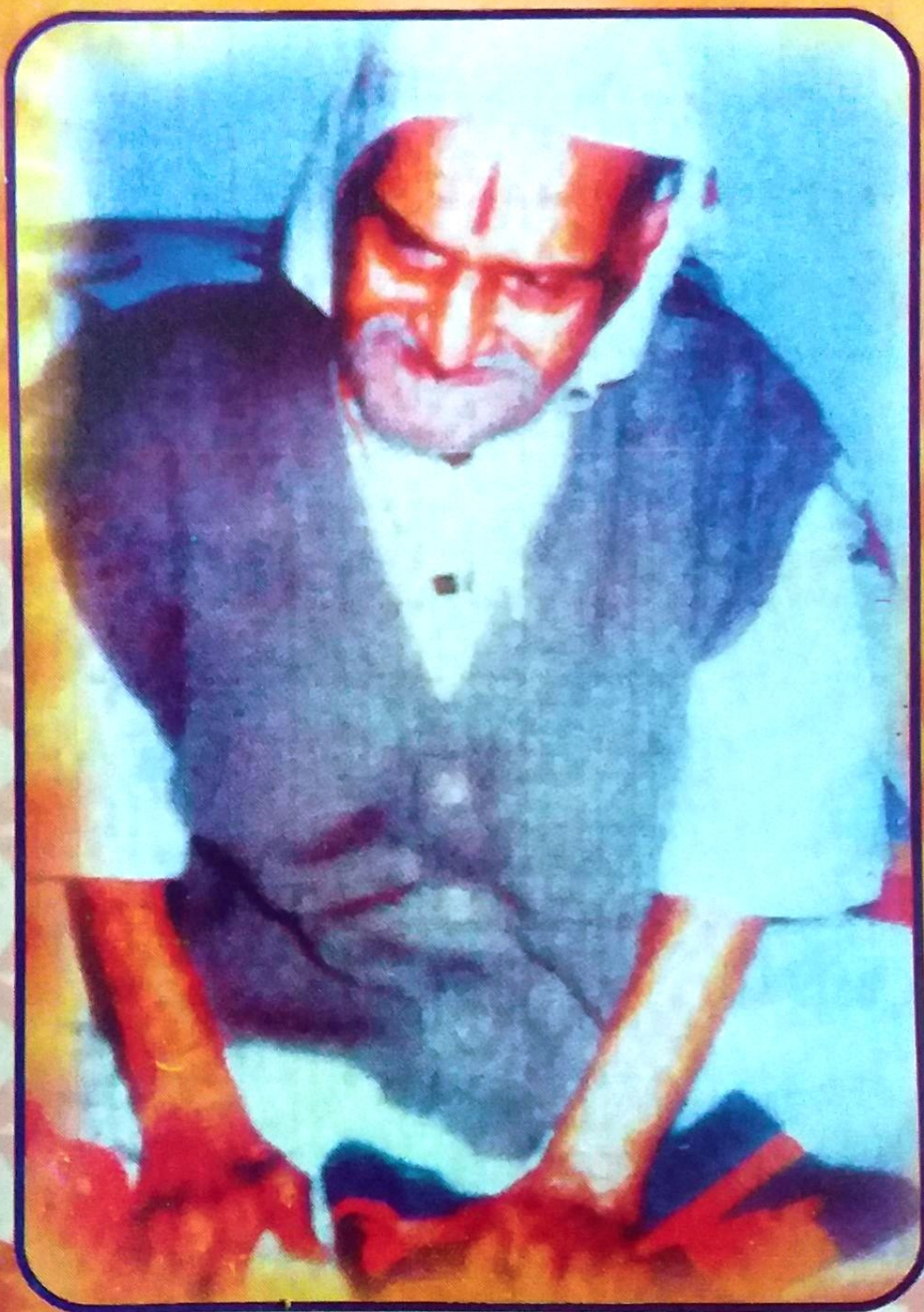
साकेत वास विक्रम सम्वत 2060
चैत्र शुक्ल पंचमी, शुक्रवार 26 मार्च 2004
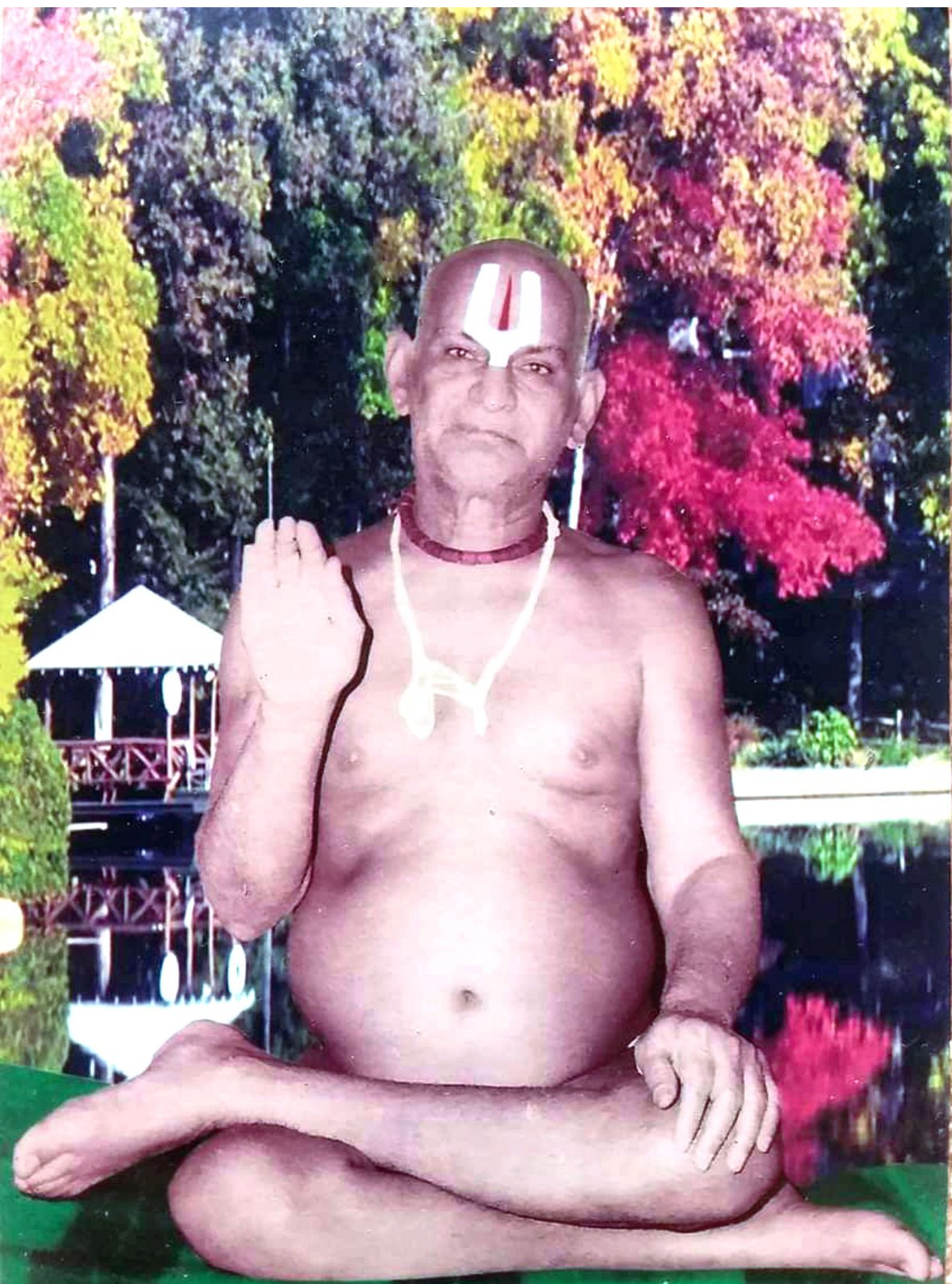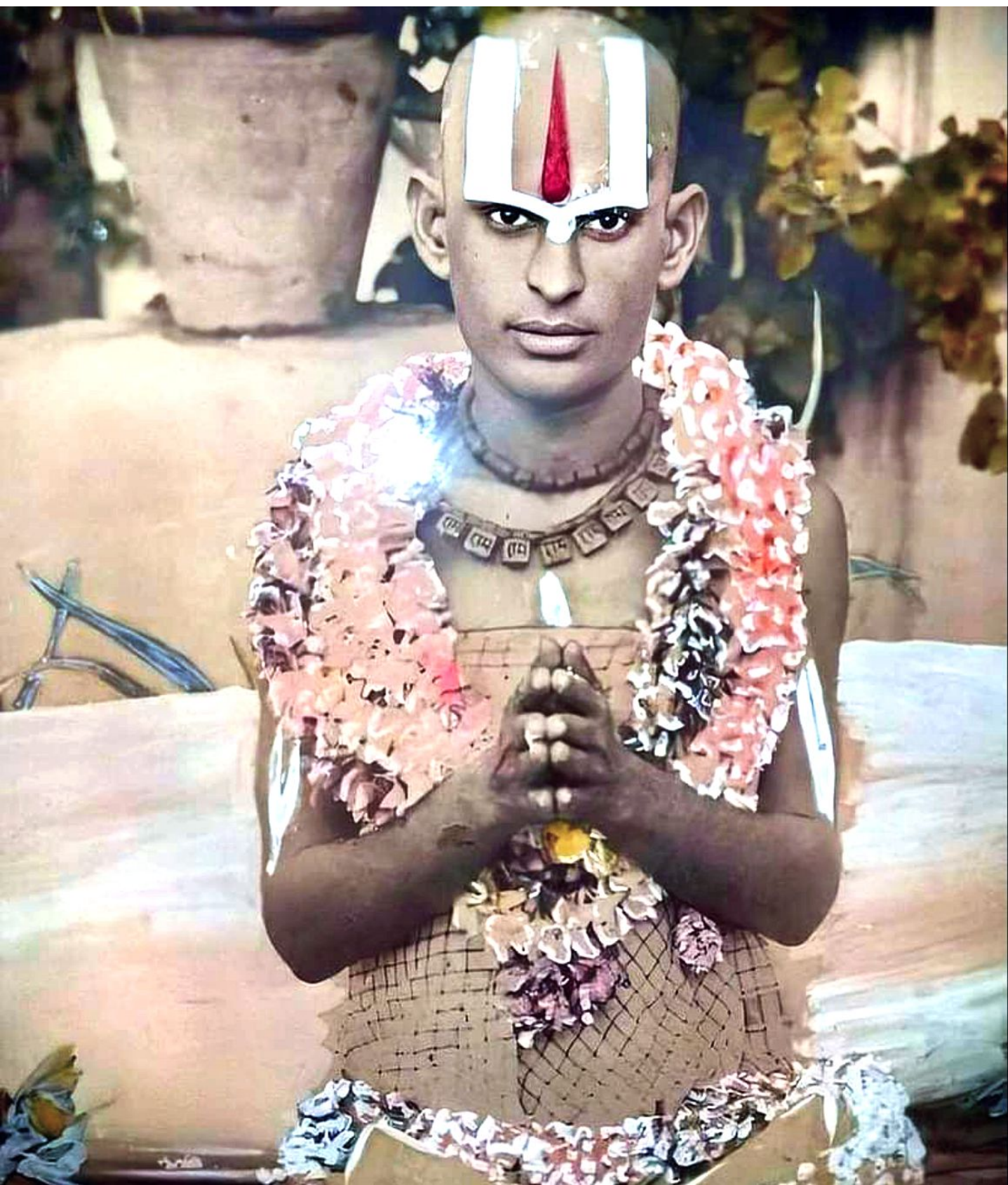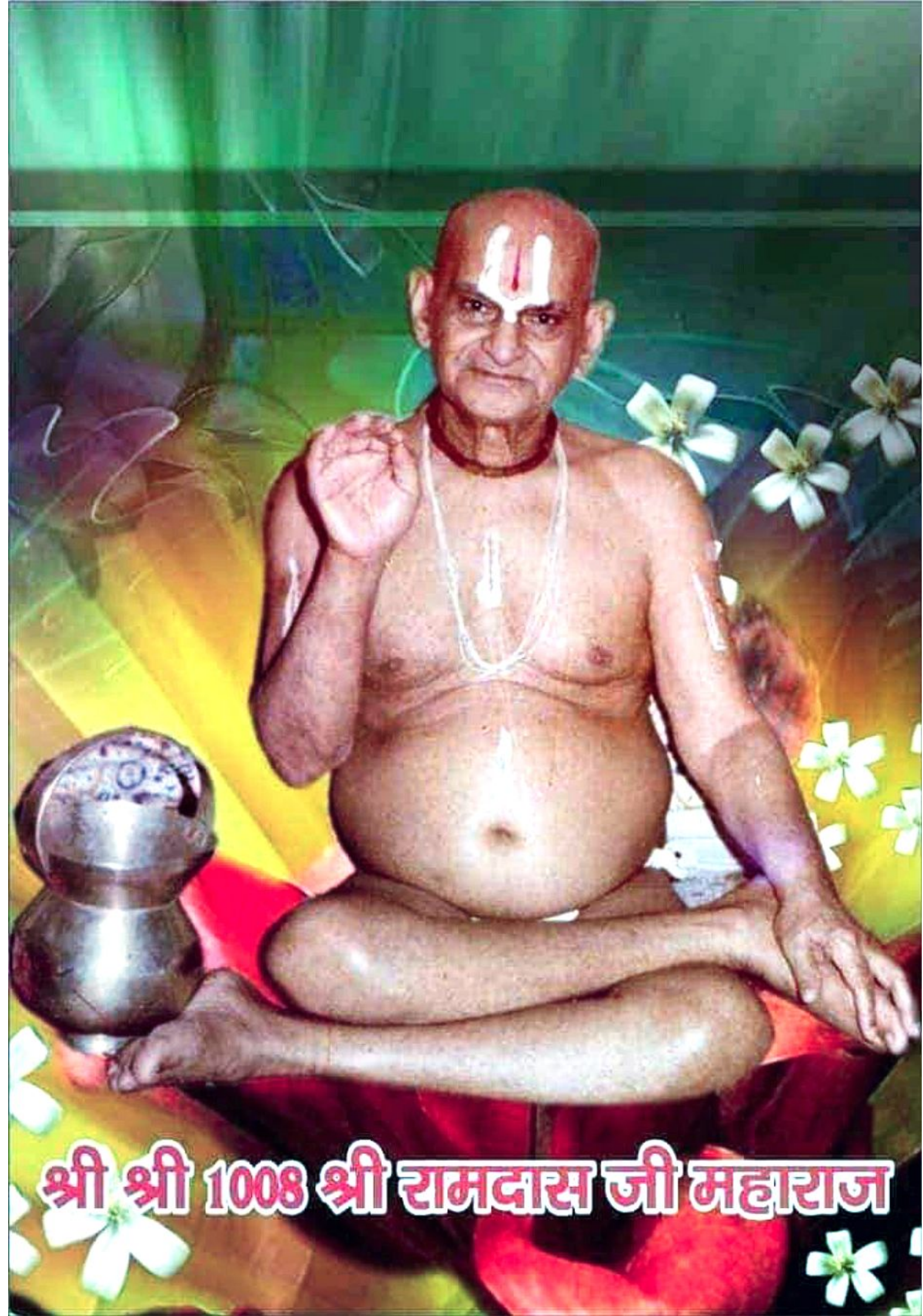
श्री श्री 1008 श्री रामदास जी महाराज
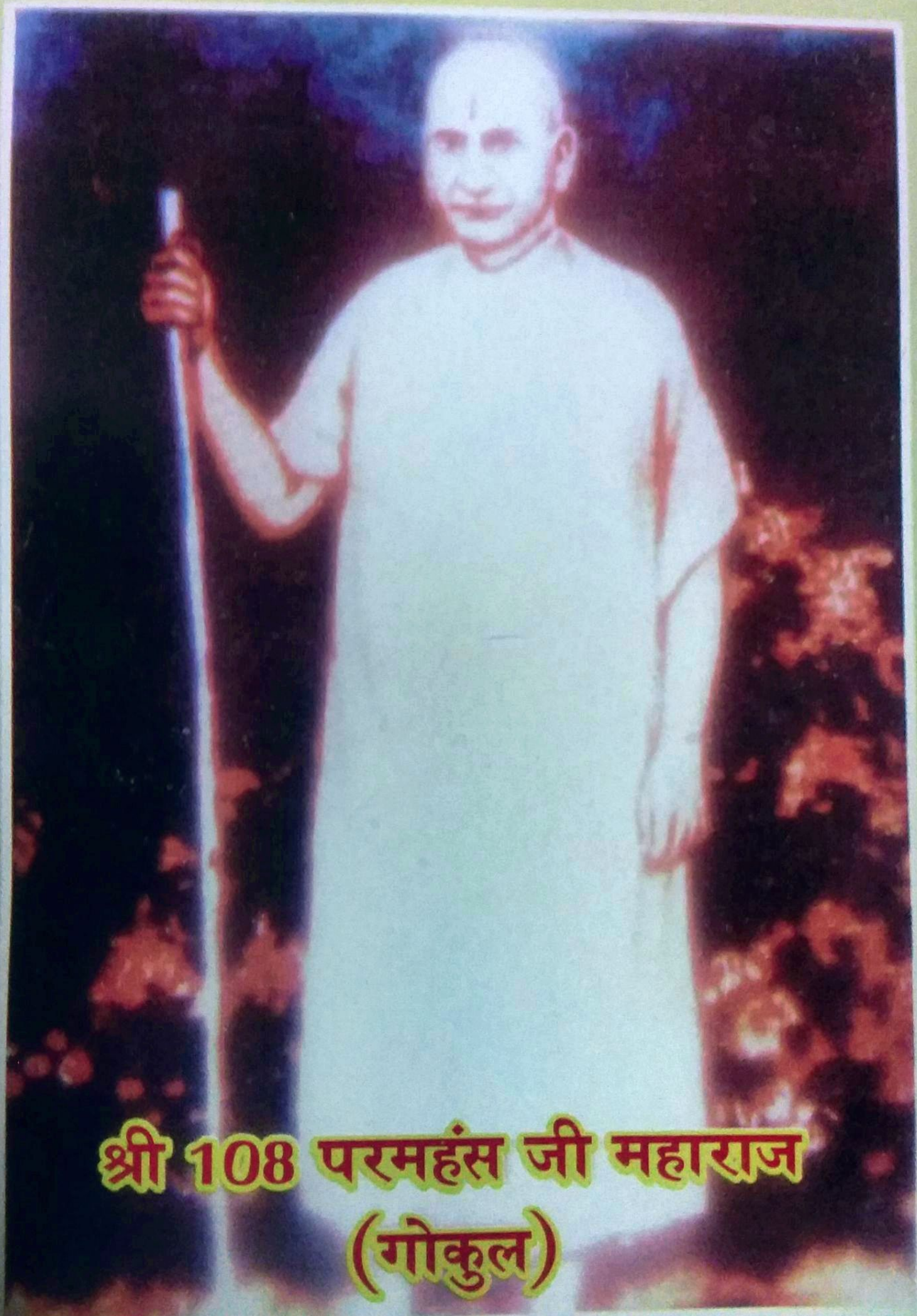
श्री 108 परमहंस जी महाराज
(गोकुल)
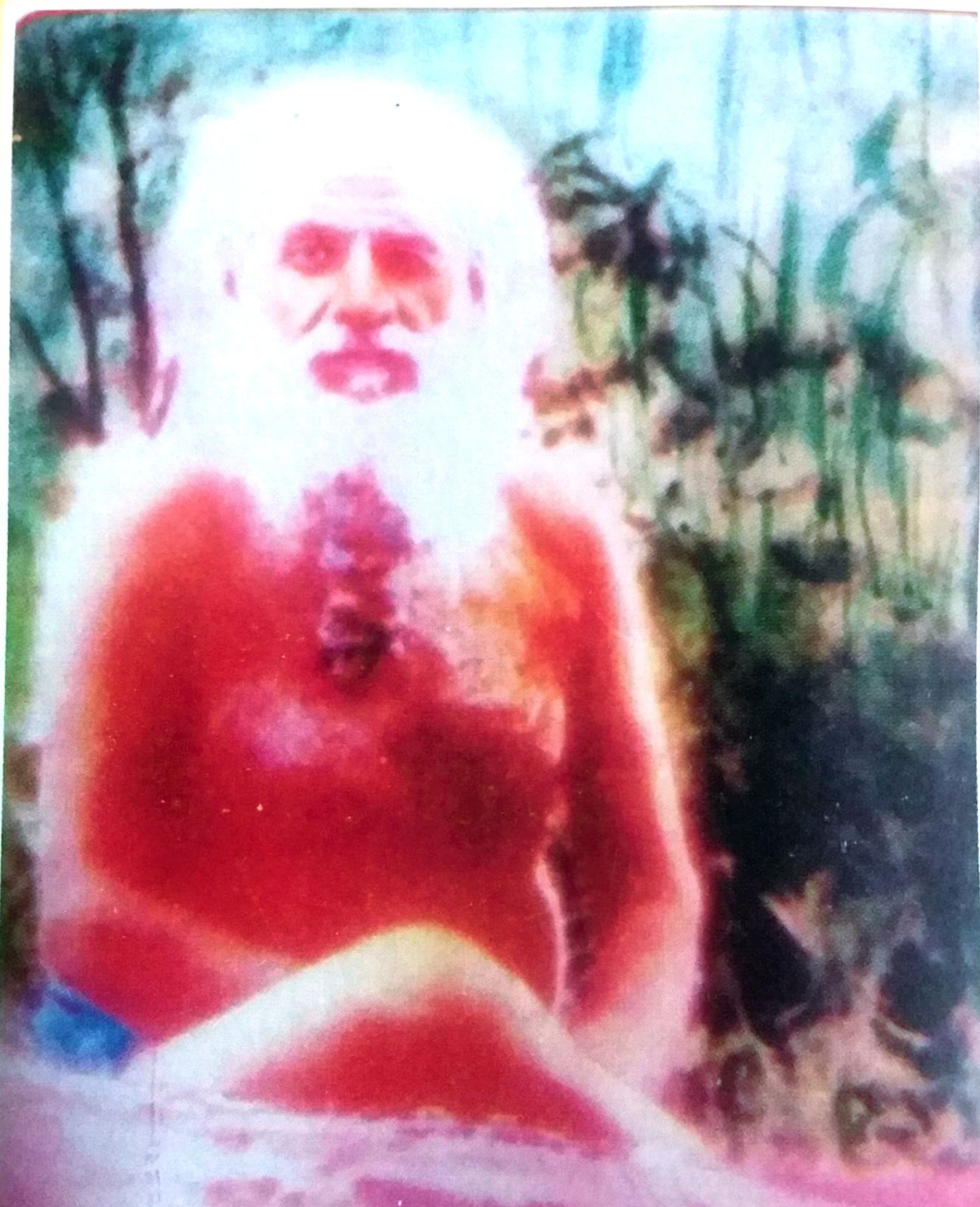
श्री 108 तपसी श्री सीताराम दास जी महाराज
(नूराबाद, मुरैना)
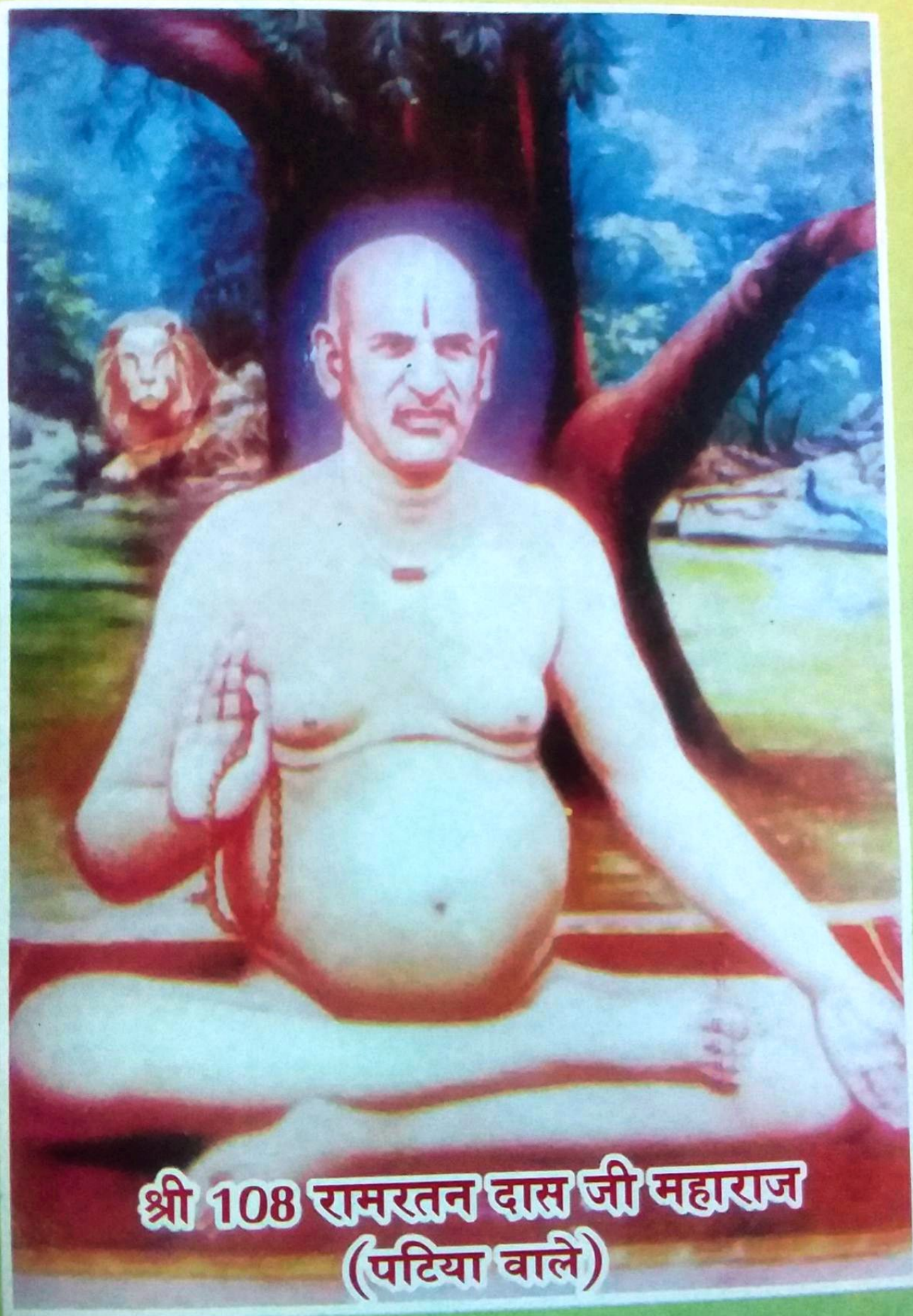
श्री 108 रामरतन दास जी महाराज
(पटिया वाले)

श्री श्री 1008 बाबा रामदास जी महाराज करह सरकार
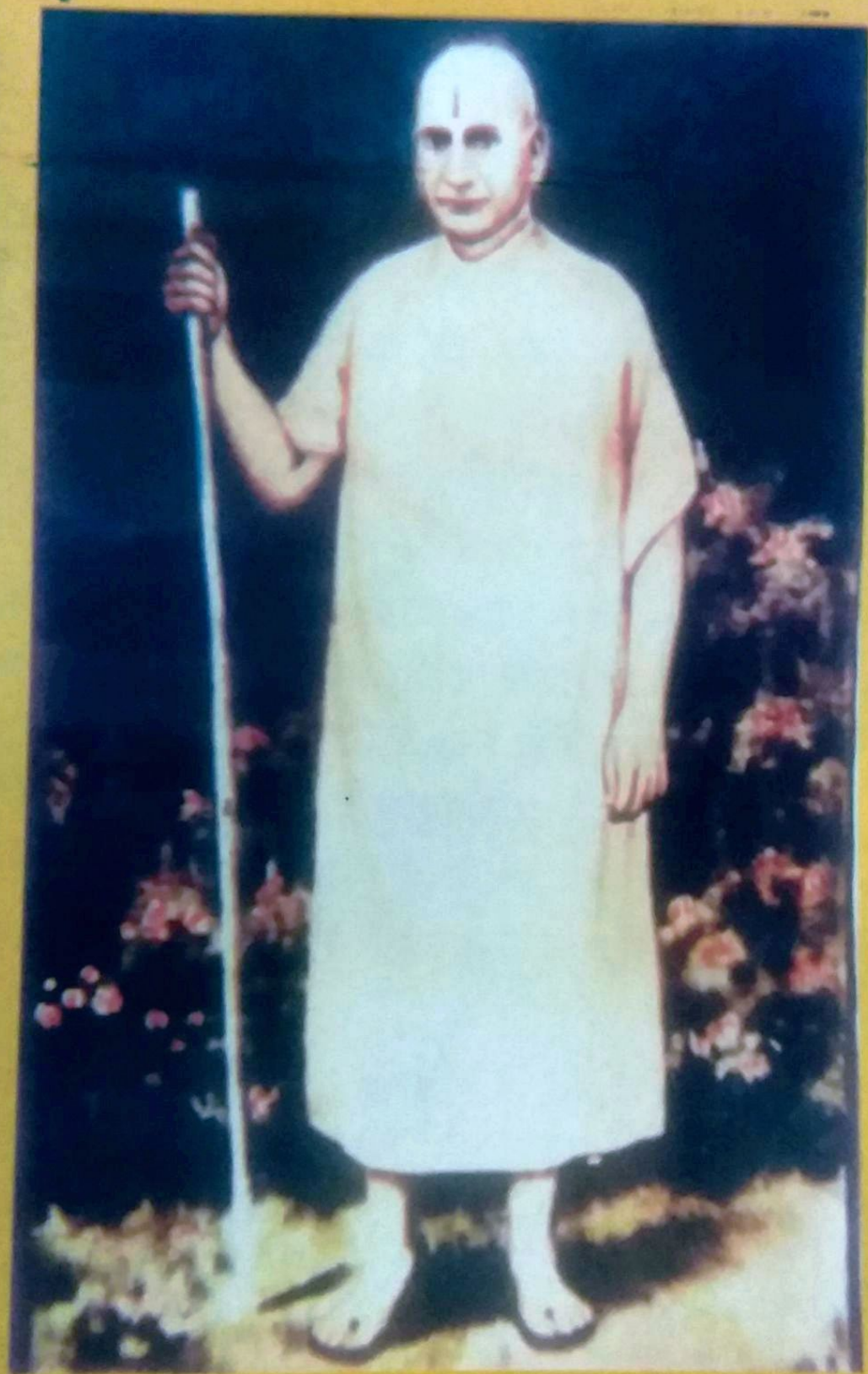
पूज्य परमहंस स्वामी भगवानदास जी
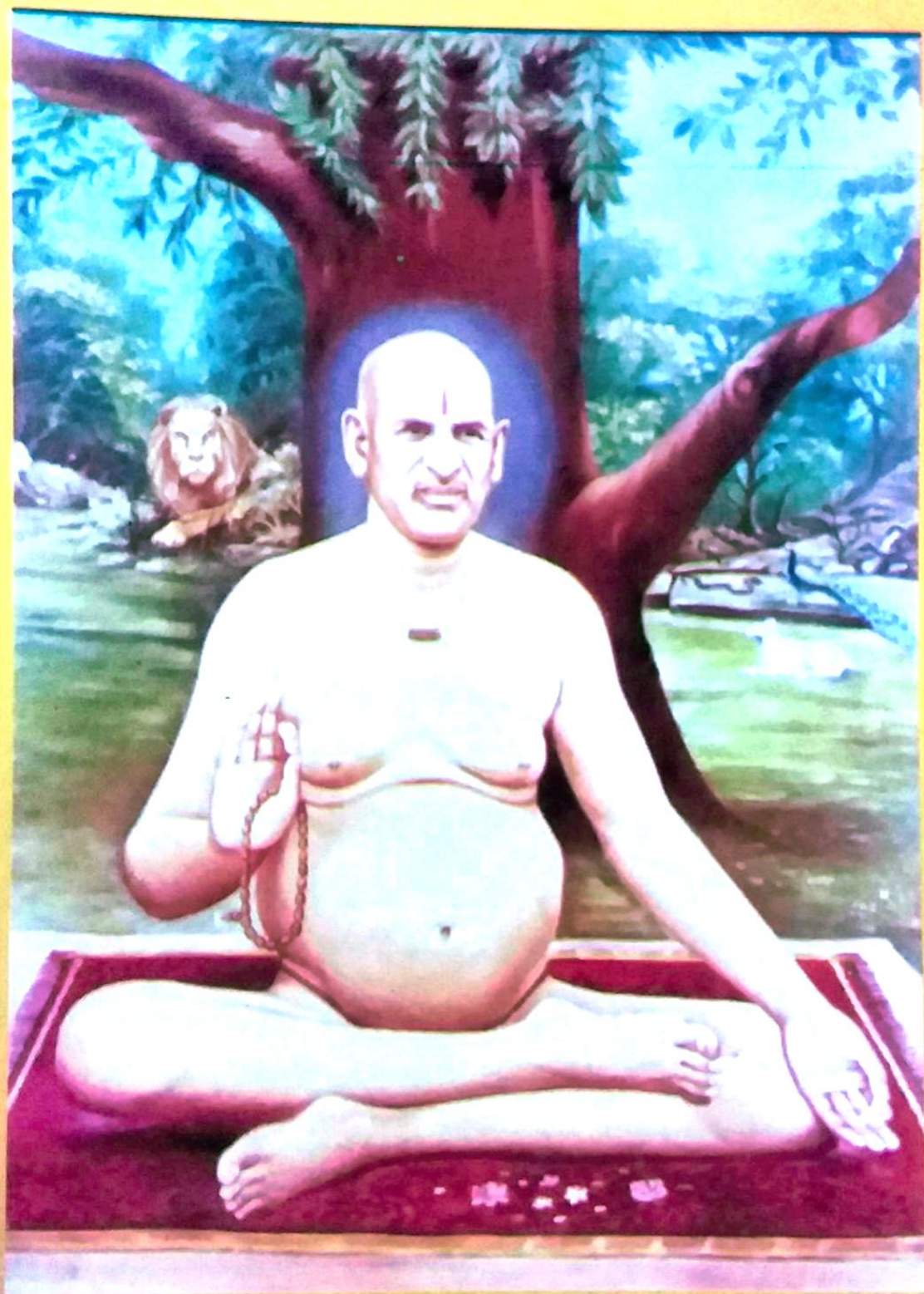
श्री पूज्य बड़े बाबा रामरतनदास जी महाराज
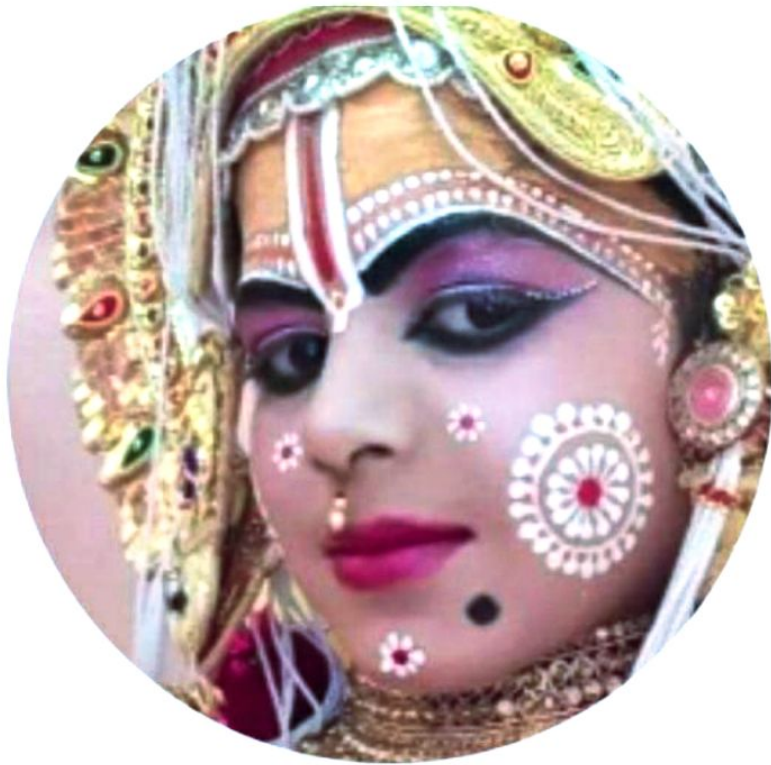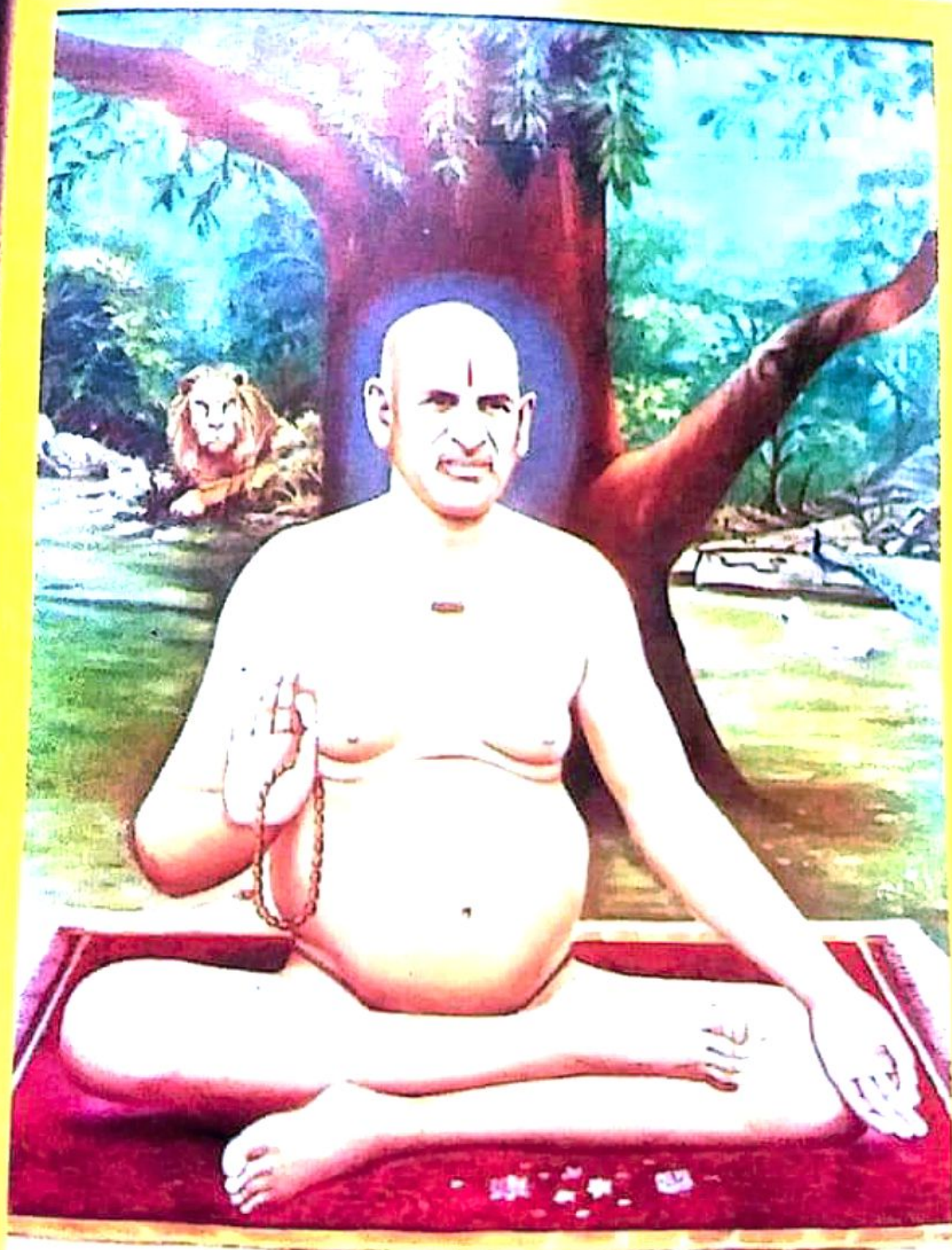
श्री पूज्य बड़े बाबा रामरतनदास जी महाराज
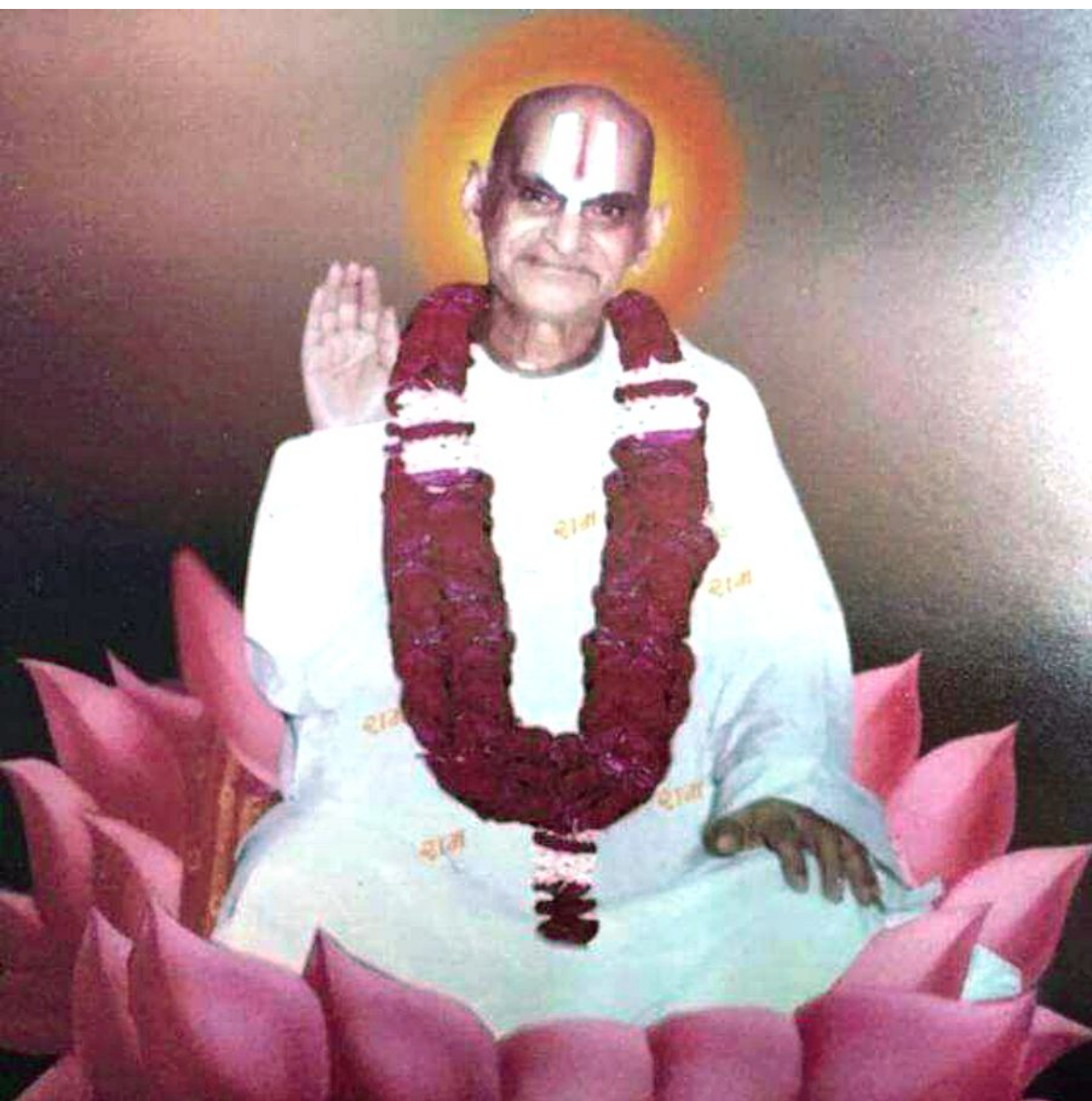
जय सिया राम
राम रघुवर की प्राण
प्रिया भजो रे मन सिया
सिया